चन्दामामा
जनवरी १९८५
2
RS

CHANDAMAMA

It unfolds the glory of India—both past and present—through stories, month after month.

Spread over 64 pages teeming with colourful illustrations, the magazine presents an exciting selection of tales from mythology, legends, historical episodes, glimpses of great lives, creative stories of today and knowledge that matters.

In 12 languages and in Sanskrit too.

Address your subscription enquiries to:
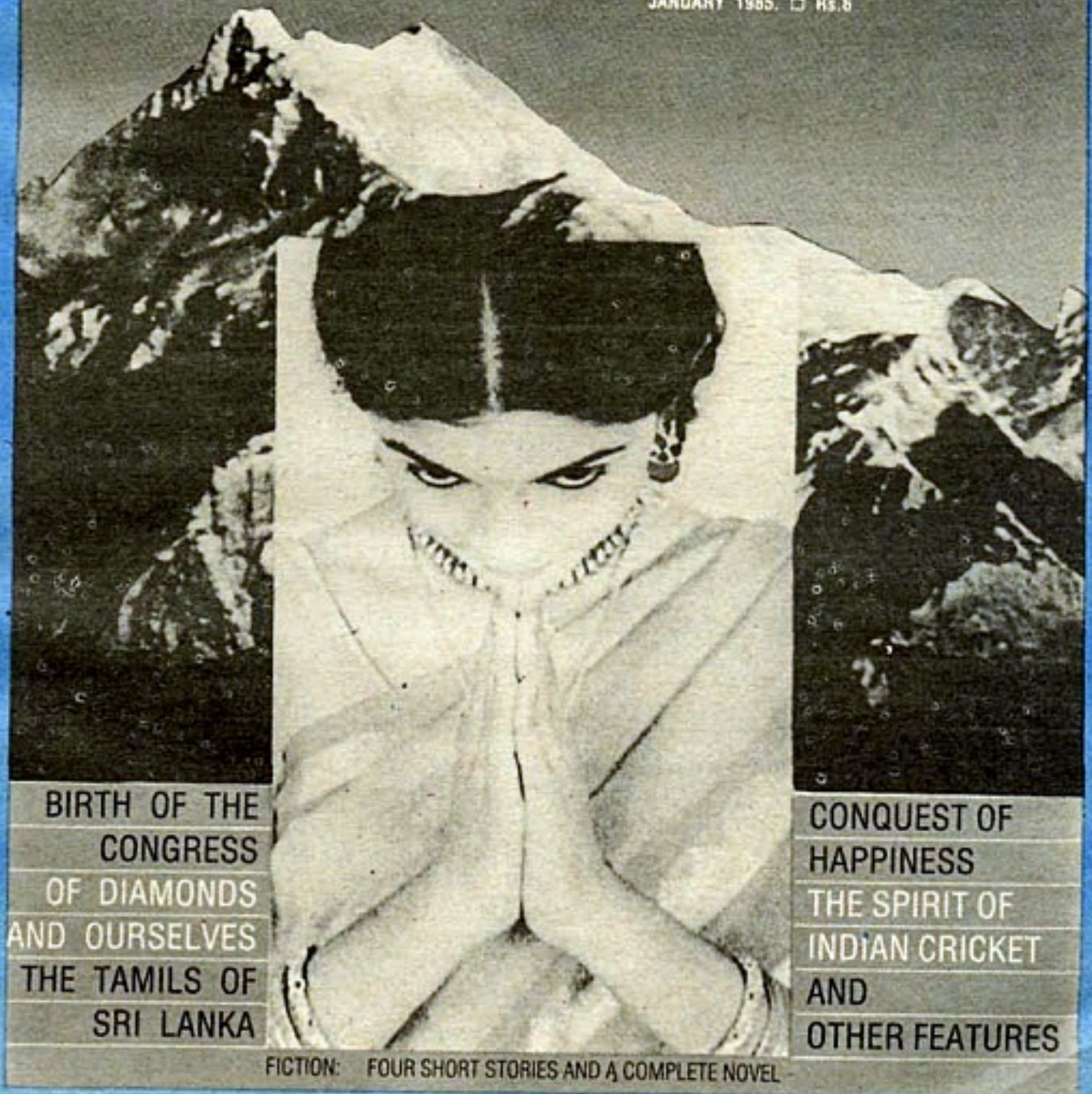
DOLTON AGENCIES 188 N.S.K. ROAD MADRAS-600 026

GET YOUR COPY TODAY

IT'S WORTH PRESERVING. EVERY ISSUE OF IT.

A CHANDAMAMA PUBLICATION

THE HERITAGE

A monthly magazine that satisfies your family's need for intelligent reading and good taste.

Dear Friend:

Every age in history had its own trends. One of the trends of our time is our eagerness to know much of many things.

As a response to this yearning there has been a magazine boom. Every now and then a new periodical is announced.

We too are bringing to you the news of a new English monthly, THE HERITAGE.

Is it to keep pace with this trend that we are launching THE HERITAGE?

Strange though it may sound, THE HERITAGE will set a new trend—you'll be proud of.

We who have worked hard for decades to give our young a clean and healthy reading fare, are now launching a magazine of sound values and enjoyable literature for your whole family, from January'85.

Essays that stimulate your thinking, features that speak of many little-known aspects of Indian culture, stories and novels that are remarkable for human values and artistic merit, will make THE HERITAGE.

With over a hundred pages of variety, blended with colour and black-and-white pictures, THE HERITAGE will refuse to compromise with anything that is unworthy of you.

We address *this letter to you*, because we feel that you will be one of those who would like to see the success of such a magazine.

Here is a pre-launch offer for you and any friend of yours whom you would like to introduce to *THE HERITAGE* Instead of Rs.72.00 which is the annual subscription, you may send Rs.60.00. This offer will remain valid till the end of December '84.

With best wishes,

The Publishers.

N.B.

M.O, or Demand Draft (drawn in favour of Dolton Agencies) may be addressed to.
Dolton Agencies, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras-600 026.

From the publishers of Chandamama

It's worth preserving. Every issue of it.

चन्दामामा

संस्थापक: 'चक्रपाणी' संचालक: नागिरेड्डी

इस शताब्दि के अन्तिम चरण में एक और वर्ष समाप्त हुआ। बीते हुए वर्ष में बहुत कुछ घटित हुआ—कुछ कल्याणकारी और कुछ विनाशकारी। जो कार्य मानव-कल्याण के लिए किये गये—चाहे वे उसकी भौतिक अवस्था को सुधारने के लिए हों या मानव-मूल्यों की प्रतिस्थापना के लिए — उन सबके लिए उत्तरदायी स्वयं मानव ही था।

नव वर्ष का शुभारम्भ हो रहा है। मानवजाति के सामने अनेक प्रश्न मुँह बाये खड़े हैं। सबसे प्रमुख हैं — मानव-कल्याण कैसे हो ? भयानक अशान्ति की स्थिति में चिर-शान्ति की स्थापना कैसे हो ? जर्जर होकर गिरते हुये मानव-मूल्यों की रक्षा एवम् पुर्नस्थापना कैसे हो ? इनका उत्तर भी स्वयं मानव के पास है। मानव-मानव को भाई मानना, प्रत्येक धर्म को अपने धर्म के बराबर समझना, प्रत्येक प्रान्त को अपने ही प्रान्त का प्रतिरुप मानना एक ऐसे सद्भाव को जन्म दे सकता है जिसका अटूट बन्धन सारे कुचक्रों और कलुषों को धूल-धूसरित कर सकता है।

हमें आशा है कि नई पीढ़ी के तुम लोग अपने जीवन के मूल्यों को भेद-भावों से परे निर्धारित करोगे और एक ऐसे समाज का नव-निर्माण करोगे जिसमें सब एक दूसरे के प्रति भ्रातृभाव रखेंगे और राष्ट्र को प्रगति के पथ पर अग्रसर करेंगे। आशा ही नहीं, विश्वास है कि तुम्हारे प्रयत्नों से एक ऐसे नये भारत का उद्भव होगा जिसके आकाश में तुम लोग ध्रुव तारे और सप्तऋषियों की भांति कांतिमान चमकोगे।

वर्ष: ३७ जनवरी १९८५ अंक: ५
एक प्रति: २-०० :: वार्षिक चन्दा: २४-००

अपूर्व दृश्य

मध्ययुग के योद्धा किस प्रकार के कवच धारण करते थे ? कैसे चलते थे ? ये बातें सब को बताने के उत्साह से प्रेरित होकर ब्रिटेन के निवासी बिक ब्राउन ने ११२ पाउण्ड वजन दार कवच धारण करके एडिनबरा से डमप्रीस तक तीन दिन तक यात्रा की ।

कवि की समाधि

सब लोग पृथ्वी राज और संयोगिता की वीरोचित गाथा से भलीभांति परिचित हैं। पृथ्वीराज की राजसभा में चन्द बरदाई नामक कवि रहते थे। वे पृथ्वीराज के अत्यन्त निकट मित्र भी थे । हाल ही में उस कवि की समाधि का पुरातत्व विभाग के अधिकारियों ने उत्तर प्रदेश के हास्वा नामक स्थान पर पता लगाया है ।

अनुवाद-यंत्र

जापान की भाषा से अंग्रेज़ी में अनुवाद कर सकने वाले एक अनोखे यंत्र का निर्माण जापान में किया गया है । यह यंत्र प्रति घंटा तीन हज़ार शब्दों का अनुवाद करेगा ।

क्या आप जानते हैं ?

१. क्या आप जानते हैं कि प्रशान्त महासागर का नामकरण किसने किया ?
२. हिन्द महासागर का सबसे अधिक गहरा भाग कौन सा है ?
३. भारत और श्रीलंका को अलग करने वाली जल-सन्धि का क्या नाम है ?
४. विश्व की सबसे लम्बी नदी कौन सी है ?
५. रोम के समीप बहने वाली नदी कौन सी है ?

(उत्तर पृष्ठ ६४ पर देखें ।)

घर की रखवाली

रायपुर में शिवनाथ का एक अच्छा-खासा मकान था। उसने अपनी युवावस्था में खूब परिश्रम करके धन कमाया था। उसी धन से वह मकान बनवा लिया था। इसलिए उस मकान के प्रति उसके मन में बड़ा आकर्षण था।

एक दिन शिवनाथ की पत्नी श्यामला ने कहा, "सुनो जी, हमारे गाँव के कई लोग एक साथ काशी की यात्रा की तैयारी कर रहे हैं। हमें भी देवी-देवताओं की आराधना करने के लिए तीर्थ स्थानों को जाना चाहिए। इससे अच्छा अवसर फिर नहीं मिलेगा। क्या हम भी उनके साथ चलें ?"

शिवनाथ खीझ कर बोला, "एक दुर्ग जैसे हमारे इस मकान को छोड़ कर हम यात्रा पर चले जायें तो इस का क्या होगा ? काशी यात्रा से लौटने में कम से कम छः महीने लग जायेंगे। इस बीच हमारे घर की रखवाली कौन करेगा ?"

पति के मुँह से यह बातें सुनकर श्यामला नाराज़ होकर बोली, "ऐसा मालूम होता है कि इस मकान के साथ तुम्हारे मोह के पीछे कोई कारण है। दूर के प्रदेशों में नौकरियाँ करते हुए तुम्हारे पुत्र वहीं पर अपना स्थाई निवास बना चुके हैं, इसलिए उन्हें इस मकान की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके अलावा हमारे पुत्र बराबर तुम्हें समझाते रहे हैं कि अपना यह मकान बेच कर हम लोग उनके साथ ही रह जायें, पर उनकी बातें तुम्हें समझ में नहीं आतीं। अब भी सही, तुम उनकी बात मान लो तो तुम घर की चिन्ता से मुक्त हो जाओगे। साथ ही तुम्हें यात्रा के लिए दूसरों से उधार लेने की नौबत नहीं आएगी। यात्रा के बाद हम अपने पुत्रों के पास ही रहेंगे।"

"अच्छी तरह से कान खोल कर सुनो ! मेरे ज़िन्दा रहते इस मकान को बेचने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता," शिवनाथ ने अपनी पत्नी को

मीना गोविल

डांट दिया ।

फिर भी श्यामला हठ करके बोली, "मैं जब भी कहीं जाने की बात करती हूँ तो घर की रट लगाये रखते हो । लेकिन तुम यह बात नहीं समझ पाते कि हमारे हाथ पैरों के चलते ही इस प्रकार की यात्राएँ पूरी कर लेनी चाहिए । चाहो तो यात्रा से लौटने तक हमारे घर की रखवाली करने के लिए मेरा छोटा भाई या तुम्हारा भानजा भी तो है ।"

इस पर शिवनाथ थोड़ा गरम होकर बोला, "यदि मुझे घर छोड़ कर कहीं अनिवार्य रुप से जाना पड़ा तो मैं घर पर ताला लगा कर निकलूँगा, लेकिन रिश्तेदारों को अपने घर के अन्दर कदम नहीं रखने दूँगा ।" यह कह कर थोड़ी देर सर खुजलाता रहा, फिर हठात् उठ कर बोला, "अच्छी बात है । तुम्हारी इच्छा के अनुसार हम भी यात्रा पर चल पड़ेंगे ।" इसके बाद वह घर से बाहर निकल पड़ा ।

पति के मुँह से ये शब्द सुनने पर श्यामला की खुशी का कोई ठिकाना न रहा ।

शिवनाथ सीधे सेठ वर प्रसाद के घर पहुँचा, अपनी काशी यात्रा का समाचार सुनाकर बोला, "सेठ साहब ! आप मेरे मकान को गिरवी रखकर दो हज़ार रुपये उधार दे दीजिए ।"

वर प्रसाद मन ही मन खुश हुआ, पर प्रकट रुप में खीझ कर बोला, "इस प्रकार गिरवी क्यों रखते हो ? मकान बेच ही डालो, मामला समाप्त हो जायेगा ! यदि तुम चाहो तो मैं कुछ बुजुर्गों को बुलवाकर तुम्हारे मकान का न्यायोचित मूल्य निर्धारित करवा दूँगा ।"

शिवनाथ उत्तेजित होकर बोला, "मैं मकान गिरवी रखकर उधार लेना चाहता हूँ, बेचना नहीं चाहता हूँ । यदि आप उधार नहीं देना चाहते तो मैं किसी और सेठ से ले लूँगा ।"

"अच्छी बात है, तुम्हारी जैसी इच्छा ! लेकिन एक बात याद रखो । काशी-यात्रा जैसी लम्बी यात्रा के लिए दो या तीन हज़ार पर्याप्त नहीं होंगे । मैं तुम से प्रति सैकड़ा एक रुपया ही ब्याज लूँगा । तुम्हारा मकान तो बहुत बड़ा है । उस के लिए मैं पांच-छः हज़ार भी उधार दे सकता हूँ," वरप्रसाद ने कहा ।

शिवनाथ ने सेठ् वरप्रसाद की बात मान ली और अपना मकान गिरवी रखकर उधार ले लिया ।

सेठ के घर से निकल कर शिवनाथ अपने भान्जे रंगनाथ के घर पहुँचा और कहा, "अरे सुनो, तुमने कुछ दिन पहले मुझे बताया था कि तुम्हारे खेत से लगे किसी और व्यक्ति का खेत तुम खरीदना चाहते हो और इसलिए तुम सेठ वर प्रसाद से उधार लेने की बात सोचते हो । क्या तुम्हारा काम बन गया ?"

रंगनाथ चिन्तित स्वर में बोला, "वह कंजूस सेठ वरप्रसाद इतनी आसानी से थोड़े ही उधार देगा । वह तो फी सैकड़ा दो रुपये ब्याज़ मांग रहा है, इसलिए मैं सोच में पड़ गया हूँ कि क्या करूँ ?"

"हूँ, ऐसी बात है ! तब तुम ये पांच हज़ार रुपये ले लो । मैं और तुम्हारी मामी-हम दोनों काशी की यात्रा पर जा रहे हैं । मेरे लौटने के बाद फी सैकड़ा एंक रुपये ब्याज के साथ मुझे ये पांच हज़ार रुपये लौटा देना," यह कहकर शिवनाथ ने वह धन अपने भानजे को दे दिया ।

घर लौट कर शिवनाथ ने अपनी पत्नी को बताया कि वह काशी-यात्रा की पूरी तैयारी कर ले । पर श्यामला ने अपने पति की ओर संदेह भरी दृष्टि से देखकर पूछा, "काशी-यात्रा के लिए तुम धन कहाँ से लाये ? इस मकान की रखवाली का जिम्मा किस को सौंप रहे हो ?"

"क्या तुमको हर बात बताने की आवश्यकता है ? मैं जो कुछ करता हूँ, सोच समझ कर ही करता हूँ ।" यह कह कर शिवनाथ अपनी पत्नी पर खीझ उठा ।

इसके एक सप्ताह बाद वे दोनों पति-पत्नी अन्य यात्रियों के साथ काशी के लिए चल पड़े ।

छः महीने बाद शिवनाथ और श्यामला काशी-यात्रा से लौट आये । श्यामला ने अपने पति को सारा मकान दिखा कर कहा, "सुनोजी, अगर कोई यह कह दे कि छः महीनों से यह मकान खाली पड़ा हुआ था, तो कोई इस बात पर विश्वास नहीं करेगा । सारा मकान एक दम दर्पण जैसा साफ़-सुथरा है ! कहीं धूल या मकड़ी का जाला नाम-मात्र के लिए भी नहीं

दिखता। मैंने सोचा था कि महीने तक पानी न देने से हमारे पिछवाड़े के पेड़-पौधे सब सूख गये होंगे। लेकिन आश्चर्य की बात है कि ये पेड़-पौधे पहले से भी कहीं अधिक लह-लहा रहे हैं।"

शिवनाथ मुस्करा कर बोला, "यह सब सेठ वर प्रसाद की करामात है।"

श्यामला ने चकित होकर पूछा, "घर की इस तरह रखवाली रखने के लिए सेठ को क्या आवश्यकता आ पड़ी ?"

"इस के पीछे एक बहुत बड़ा कारण है। सेठ के मन में यह बात बैठी हुई है कि हम तो बूढ़े हो गये हैं, इसलिए कभी न कभी अपने बेटों के पास अवश्य जायेंगे। उस समय वह थोड़ा अधिक मूल्य देकर ही सही इस मकान को खरीद सकता है। मैंने उससे दो हज़ार रुपये उधार मांगे, लेकिन उसने हमारा घर गिरवी रख कर जबर्दस्ती पांच हज़ार रुपये उधार दे दिये। शायद उसने यह विचार किया होगा—एक तो हम काशी यात्रा से प्राणों के साथ नहीं लौट पायेंगे। यदि लौटेंगे भी तो उतनी बड़ी उधार की रक़म हम चुका नहीं पायेंगे। इसी बात को भांप कर मैंने सोचा कि वर प्रसाद से बढ़ कर कोई भी हमारे मकान की सुरक्षा की बात नहीं सोच सकता और घर की चाभी उस के हाथ दे आया।" शिवनाथ ने असली बात खोल दी।

"सेठ के यहाँ से जो धन उधार ले आया, उसमें से काशी यात्रा के लिए हमने एक कौड़ी भी खर्च नहीं की। हमने मेहनत करके जो धन जोड़ रखा है, उसी में से थोड़ा अंश हमने अपनी काशी-यात्रा पर खर्च किया है। सेठ से प्राप्त पांच हज़ार मैंने ऐन समय पर अपने भानजे को उधार दे दिये, कल मैं उससे पांच हज़ार रुपये ले आऊँगा और सेठ को चुका कर अपने मकान की गिरवी छुड़वा लूँगा," शिवनाथ ने गर्व के साथ कहा।

केवल घर की रखवाली के लिए उसके पति ने ऐसा नाटक रचा था, उसकी इस बुद्धिमता पर श्यामला एक दम चकित रह गई।

२

[माहिष्मती नगर के राजा यशोवर्द्धन ने अपने दो पुत्रों में से छोटे पुत्र गुणवर्द्धन का राज्याभिषेक करने का निश्चय किया, पर वीरपुर के सामन्त सूर्य वर्मा ने इसका विरोध किया। इस पर सर्पकेतु नामक सामन्त ने गुणवर्द्धन के साथ मिलकर सूर्यवर्मा का अन्त करने की योजना बनाई और एक जंगल में ताक में रहकर अचानक उस पर हमला कर दिया। बाद में.....]

सूर्यवर्मा ने भांप लिया कि वह शत्रु के व्यूह में फंस गया है। अब उसको बहुत होशियारी से काम लेना होगा। उस शत्रु का भी उसे पता चल गया। "मारो, काटो! सूर्यवर्मा अगर प्राणों के साथ बच गये तो तुम लोग मारे जाओगे।" ये शब्द उसके कानों में पड़े। उसने पहचान लिया कि यह कंठ-ध्वनि सर्पकेतु की ही है। सूर्यवर्मा के लिए यह आक्रमण एक धक्के के जैसा प्रतीत नहीं हुआ। उसको सन्देह था कि उसका विरोध खाली नहीं जाएगा। इसकी प्रतिक्रिया ज़रूर होगी। मगर ऐसा पीठ के पीछे छुरी भोंकने वाला आक्रमण! दूसरे ही क्षण सूर्यवर्मा की तलवार वायु-मण्डल को चीरते हुए भीषण रुप से ध्वनित हुई। सामने खड़े शत्रु सैनिक के सर्र के साथ पार्श्व से हमला करने के लिए उद्यत शत्रु का दाँया हाथ भी एक ही वार में कट कर दूर जा गिरा, पर उसी समय चार शत्रु सैनिकों ने उसे घेर लिया। सर्पकेतु

भीषण गर्जन करता हुआ अपने सैनिकों को उकसा रहा था। सर्पकेतु को मालूम था कि सूर्यवर्मा बलवान और होशियार सामन्त है और अगर ज़रा भी उसके सैनिक चूके तो सूर्यवर्मा दृढ़ मुकाबला करेगा।

सूर्यवर्मा ने सोचा कि उस की मृत्यु निश्चित है। अचानक उसे अपने पुत्र चंद्रवर्मा का स्मरण हो आया। वह सोचने लगा-उस की मृत्यु के पश्चात सर्पकेतु निश्चय ही उस के राज्य को हस्तगत करने का प्रयत्न करेगा। इसलिए इस के पूर्व ही अपने पुत्र को सावधान रहने के लिए सूचित किया जाय तो क्या ही अच्छा हो।

इस विचार के आते ही सूर्यवर्मा पुकार उठा— "सुबाहू ! सुबाहू !" फिर एक शत्रु सैनिक का सर काट डाला और दूसरे के घोड़े के वक्ष पर वार किया; तब अवसर पाकर अपने घोड़े को पीछे की ओर मोड़ दिया।

इतने में दूर से यह उत्तर सुनाई दिया, "प्रभु, मैं आपकी सेवा में उपस्थित हूँ। क्या आदेश है ?"

"तुम तुरंत वीरपुर जाकर चंद्रवर्मा से....." सूर्यवर्मा की बात पूरी न हो पाई थी कि एक शत्रु सैनिक ने पीछे से उसकी पीठ पर तलवार चुभो दी।

सूर्यवर्मा चीख कर घोड़े पर से नीचे गिर पड़ा। उसी समय एक साथ कई लोगों ने उस पर वार किया।

"लो, देखो। एक सैनिक भाग रहा है। उस का पीछा करके मार डालो। यदि सूर्यवर्मा की मौत की ख़बर पहले वीरपुर में पहुँची तो ठीक न होगा। सब लोग परेशान हो उठेंगे और परिणाम अत्यन्त भयंकर होगा। इस कारण से यह खबर वहाँ नहीं पहुँचनी चाहिए," सर्पकेतु चिल्ला उठा। उसपर चार-पांच अश्वारोही सैनिक भागने वाले सुबाहू के पीछे हो लिये।

सुबाहू सूर्यवर्मा के सैनिकों में अत्यन्त विश्वासपात्र था। वह बचपन से ही सूर्यवर्मा की सेवा में रत था। वह न केवल बड़ा ही समझदार था बल्कि साहसी और पराक्रमी भी था।

सुबाहू ने जब समझ लिया कि अपने स्वामी की रक्षा करना संभव नहीं तब उसने सोचा कि

वहाँ से शीघ्र भागकर यह समाचार चंद्रवर्मा को दिया जाये। पर इस बीच उसे सूर्यवर्मा की चेतावनी सुनाई दी। तुरंत सुबाहू ने अपने घोड़े को शत्रु के घुड़सवारों के बीच से होकर दौड़ाया और पहाड़ी रास्ते से निकल पड़ा।

घोड़ा द्रुतगति से दौड़ रहा था। सुबाहु को वीरपुर पहुँचने के लिए उस पहाड़ पर घुमावदार रास्ते से जाना होगा। और निश्चय ही शत्रु उसका पीछा करगें। वह अकेला है और वे अनेक। उसे एक ही कार्य पूरा करना है, उसके बाद चाहे उसकी जान चली जाए। उसे शत्रुओं से चंद्रवर्मा को सचेत करना है बस! लेकिन वह रास्ता अत्यन्त संकरीला था। सिर्फ दो घोड़ों को आम्ने-सामने आकर हट जाने भर का रास्ता था।

सुबाहू ने अपने घोड़े को पहाड़ पर चढ़ाते हुए पीछे मुड़ कर देखा। उस का पीछा करने वाले घुड़सवार भी अपने घोड़ों को एक के पीछे एक पहाड़ पर चढ़ा रहे थे।

अब शत्रु सैनिकों तथा सुबाहू के मध्य एक बाण के प्रहार की दूरी रह गई थी।

सुबाहू ने भांप लिया कि उसके तथा शत्रु के बीच की दूरी को थोड़ा और बढ़ाने पर ही वह बच सकता है, अन्यथा दुश्मन के बाणों का शिकार होना पड़ेगा।

सुबाहू इस प्रकार सोच ही रहा था कि इतने में सर्र से एक बाण आकर उसके पीछे दस-बारह गज की दूरी पर एक पहाड़ी चट्टान से टकराया और दो टुकड़ों में टूट कर नीचे गिर पड़ा। अब क्या था! किसी पल एक बाण उसके अंग के टुकड़े कर देगा।
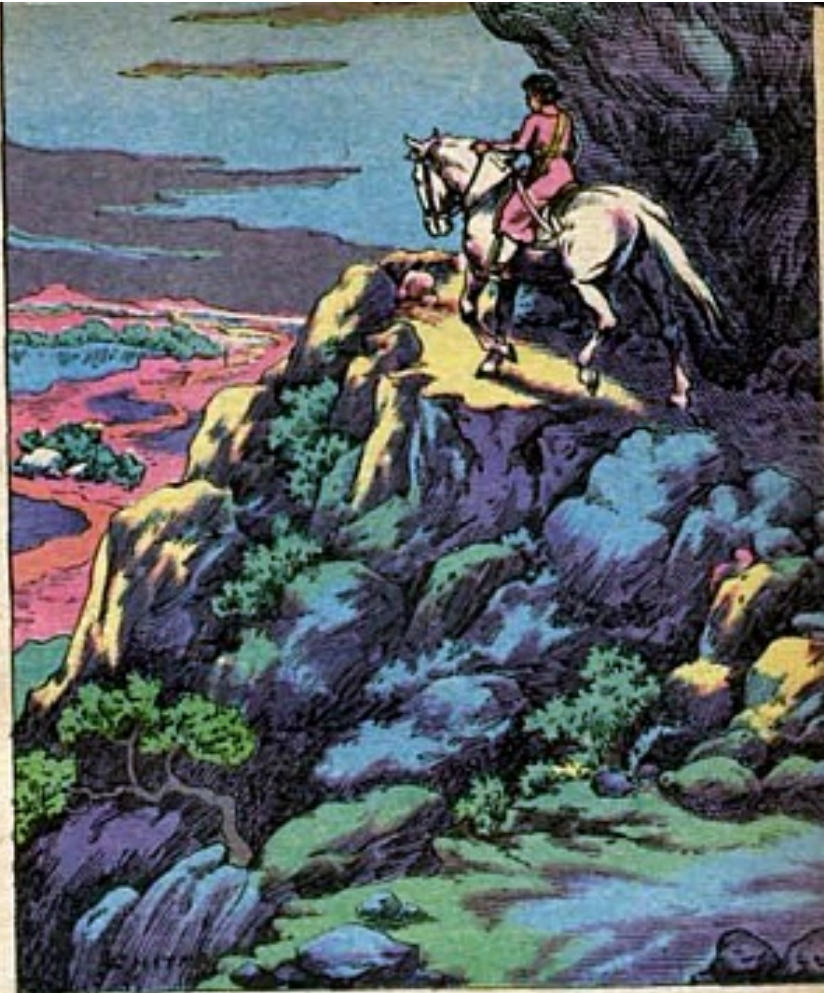
सुबाहू ने अपने घोड़े को ऐड़ लगाई। वह और तेज़ी के साथ दौड़ने लगा। पीछे से चिल्लाहटों और बाणों की सर्र-सर्र की ध्वनियाँ सुनाई दे रहीं थीं। ऐसा प्रतीत होता था मानो दुश्मन निकट आ गये हैं। थोड़ी देर बाद उसने फिर पीछे मुड़कर देखा। अब शत्रु सैनिकों तथा उसके बीच की दूरी और कम हो गई थी। पर वे लोग बराबर उसका पीछा कर रहे थे। सुबाहू ने सोचा कि उसे तुरंत यहां से निकल जाना चाहिए और फासला बढ़ा लेना चाहिए। यह सोचकर वह अपने घोड़े को ऐड़ लगाता रहा। वह

निरन्तर बढ़ने का प्रयास कर रहा था। मगर दुश्मन भी कमज़ोर नहीं थे। वे भी घोड़ों को बढ़ा रहे थे।

टेढ़े-मेढ़े उस पहाड़ी संकरीले रास्ते पर सुबाहू अपने घोड़े को आगे बढ़ाते चला जा रहा था। उस के दायीं ओर एक पहाड़ी ऊँची चट्टान और दूसरी तरफ गहरी घाटी थी। यदि घोड़े का पैर थोड़ा भी फिसला तो उस गहरी घाटी में गिरकर चूर-चूर हो जाना निश्चित था। इसके अलावा धीरे-धीरे अन्धेरा फैलता जा रहा था। इस कारण रास्ता भी साफ़ दिखाई नहीं दे रहा था। लेकिन दुश्मन उसका पीछा कर रहा है, उसके प्रमाणस्वरुप घोड़ों की हिनहिनाहटें और उनके खुरों से लगकर घाटी में गिरने वाले पत्थरों के टुकड़ों की ध्वनि स्पष्ट सुनाई दे रही थी।

थोड़ी देर में चारों ओर अन्धेरा फैल गया और चंद्रमा का भी उदय हुआ। पहाड़ी रास्ता और टेढ़ा-मेढ़ा नज़र आ रहा था। ऐसी अवस्था में सुबाहू को अचानक शत्रु के घुड़सवार घाटी के उस पार दिखाई दिये। कुछ क्षण पहले ही वह उसी रास्ते से आया था। वैसे एक गहरी घाटी उनको अलग कर रही थी, पर उनके बीच की दूरी समीप थी। अब शत्रु के द्वारा उसपर बाणों की वर्षा करना बहुत ही आसान है, यह सोचकर सुबाहू अपने घोड़े से उतरने को था तभी सर्र से आकर एक बाण घोड़े की बगल में चुभ गया।

घोड़ा अपने अगले पैरों को ऊपर उठा कर जोर से हिनहिनाया, तभी अंधे की तरह दायीं

ओर के पहाड़ी छोर से अपने सर को टकराया और धम्म से बगल की ओर गिर पड़ा। उसके साथ सुबाहू भी नीचे गिर पड़ा। फिर घोड़ा ज़ोर से हिनहिना कर घाटी की ओर लुढ़क पड़ा। रकाब में सुबाहू के पैर फंसे हुए थे, इस कारण वह भी घाटी की ओर खिंच गया। पांच छः बार लुढ़कने के पश्चात घाटी थोड़ी सीधी थी, उस स्थिति में सुबाहू के हाथ में एक मज़बूत पेड़ की डाल पकड़ में आ गई।

सुबाहू ने अपने दोनों हाथों से उस डाल को कसकर पकड़ लिया। तब उसके पैर से रकाब निकल गया। कुछ क्षण उसे ऐसा लगा जैसे उसका अन्त भी उसके घोड़े की भांति होगा। मगर अब उसे थोड़ी आशा का एहसास हुआ।

घोड़ा ऊँची आवाज़ के साथ पत्थरों पर थोड़ी दूर लुढ़कता गया और अन्त में उच्च ध्वनि के साथ नीचे की गहरी घाटी में गिर गया।

घाटी के उस पार के पहाड़ी मार्ग से एक साथ तालियों के बजने की गड़गड़ाहट तथा सैनिकों की चिल्लाहटें भी सुनाई दीं। सुबाहू ने भांप लिया कि शत्रु उस के मर जाने के भ्रम में पड़ गये हैं। उन्होंने समझा था कि घोड़े के साथ सुबाहू भी घाटी में गिर कर चूर-चूर हो गया है।

सुबाहू पेड़ की डालों में चुप-चाप बैठा रह गया। वैसे वह प्रदेश अंधेरे से भरा हुआ था, पर स्वच्छ चांदनी में उस के हिलने पर भी शत्रु पहचान सकता था। ऐसी अवस्था में एक और बाण चला कर शत्रु उस के प्राण ले लेगा।

यों विचार करके सुबाहू ने डालों के बीच से शत्रु सैनिकों की ओर देखा। वे घोड़ों पर से
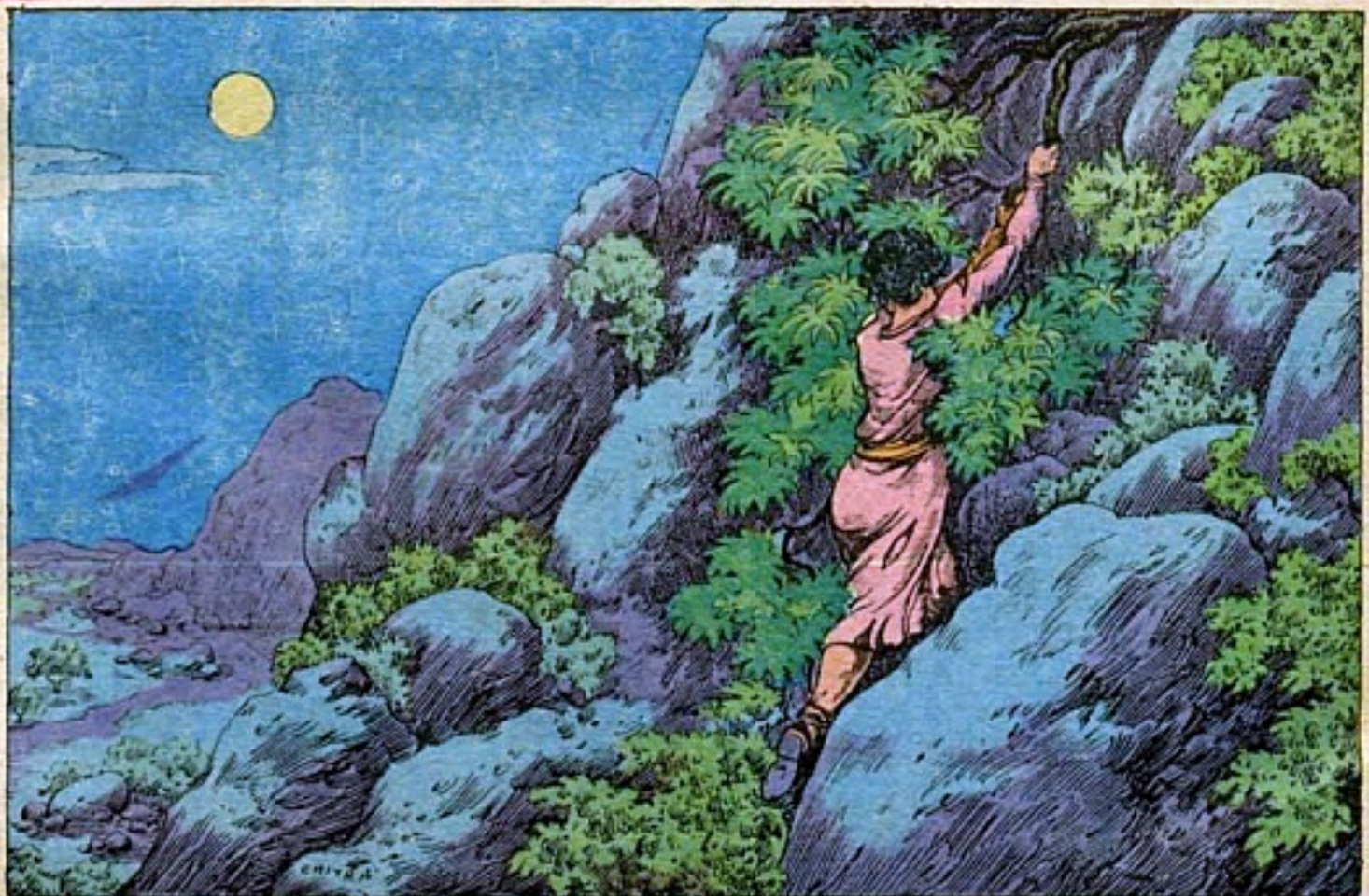
समय उस को वह दर्द अधिक पीड़ाजनक प्रतीत नहीं हुआ। उसे इस बात का पूर्ण सन्तोष था कि वह शत्रु के हाथों में पड़ने से बच गया है। अब सूर्योदय के पहले ही वीरपुर पहुँच कर चंद्रवर्मा को इस दुर्घटना की सूचना दे सकता है और सर्पकेतु के साथ बदला लेने का उपाय भी सोच सकता है।

थोड़ी ही देर में शत्रु सैनिक पहाड़ी मार्ग के मोड़ को पार कर गये, तब सुबाहू पेड़ की डालों की ओट से बाहर निकल आया। उसके कपड़े फट कर चीथड़े बन गये थे। शरीर पर खरोंचें होने के कारण घावों से खून बह रहा था। उसने दो मुट्ठी भर कर कुछ पौधों के पत्ते तोड़े और उनका रस निछोड़ कर घावो पर लेप लिया। उसी समय समीप में पहाड़ी चीते के गरजने की आवाज उसे सुनाई दी।

उस गर्जन को सुनकर सुबाहु निश्चेष्ट हो गया। तब उसे ध्यान आया कि उन पहाड़ी घाटियों में केवल चीते ही नहीं बल्कि भेड़िये और बड़े-बड़े अजगर भी होते हैं। ऐसे खूँख्वार जानवरों के मुँह में जाने से अपने को बचाने के लिए किसी न किसी प्रकार के हथियार की बड़ी आवश्यकता है। परन्तु उस की तलवार और ढाल घोड़े से गिरते व लुढ़कते समय कहीं गिर गई थी।

सुबाहू ने इधर-उधर अपनी नज़र दौड़ाई, फिर समीप के पेड़ से एक मज़बूत डाल को तोड़ लिया। कोई भी हथियार पास न होने से तो डाल का होना भी अच्छा ही था। कम से कम

उतर कर घाटी की छोर पर आ पहुँचे और घुटनों पर झुक कर घाटी में झांक कर देखा, तब अपने-अपने घोड़ों के पास लौट आये। थोड़ी देर आपस में विचार-विमर्श किया। सुबाहू यह सोच कर डर रहा था कि शायद दुश्मन ने उसको देख लिया हो। इतने में उनकी खिलखिलाहटें सुनाई दीं। इसके बाद शत्रु सैनिकों ने अपने घोड़ों को मोड़ लिया और उन पर सवार हो चल पड़े।

सुबाहू ने निश्चिन्त होकर ठंडी सांस ली। अब तक उसने अपनी सांस को भी रोक रखा था। ऐसी चट्टानों में तो बारीक आवाज भी साफ़ सुनाई पड़ती है। रकाब में फंस कर मोच खाने से उसका पैर दुःख रहा था, फिर भी उस

वह बिल्कुल निहत्था तो न रहेगा। इस प्रकार उसने अपने आपको ढाढस बँधाया। उस को अपने हाथ में लेकर शिलाओं तथा पौधों का सहारा ले धीरे-धीरे रेंगते हुए पहाड़ी रास्ते पर आ पहुँचा।

वहाँ से वीरपुर जानेवाले रास्ते से सुबाहू अच्छी तरह से परिचित था। इसलिए वह उस धुंधली रोशनी में बड़ी सतर्कता के साथ चलते हुए आधी रात तक पहाड़ी घाटी के उस पार स्थित एक गाँव के निकट पहुँचा।

गाँव अभी थोड़ी दूर था, पर सुबाहू ने देखा कि मशालों की रोशनी में कुछ लोग एकत्रित होकर आपस में चर्चा कर रहे हैं, इतनी रात के समय ग्रामवासियों के लिए गाँव के बाहर काम ही क्या है? फिर उसके मन में शंका हुई, शायद वे लोग डाकू और लुटेरे हों। इस बीच उसे घोड़ों की टापों की ध्वनि सुनाई दी। अत्यन्त वेग के साथ दौड़ कर आये हुए कुछ अश्वारोही मशाल के प्रकाश में एकत्रित हुए लोगों के पास आये और बोले, "तुम लोग अभी तक यहीं पर विलम्ब कर रहे हो? चलो, जल्दी करो।" यों चेतावनी देकर वे लोग आगे निकल गये।

इस घटना ने सुबाहू को न केवल आश्चर्य में डाल दिया, बल्कि उसके मन में संदेह भी पैदा कर दिया। वे सब मशालची डाकू और लुटेरे नहीं हो सकते। घुड़सवारों की पोशाकों से यही मालूम होता था कि वे लोग सैनिक थे। लेकिन वे लोग वीरपुर के सैनिक थे या सर्पकेतु के?

सुबाहू असमंजस में पड़ गया। अन्धेरे में पता लगाना असम्भव था। मशालों के घेरे में खड़े हुए लोगों को वहाँ से चलकर किस प्रदेश में जाना होगा?

यह विचार कर सुबाहू इस निर्णय पर पहुँचा कि इन सारे प्रश्नों का उत्तर पाना है तो उसको उन मशालचियों के प्रदेश में पहुँचना होगा। यदि वे वीरपुर के सैनिक हों तो वह उनसे एक घोड़ा लेकर शीघ्र वीरपुर पहुँच सकता है। ऐसा न होकर यदि वे शत्रु के सैनिक हों तो.....?" तो कुछ भी नहीं किया जा सकता। वैसी स्थिति में तो स्वयं उसके प्राण भी अवश्य चले जायेंगे। पर कुछ न कुछ तो करना ही था। यों विचारकर सुबाहू ने अपने वस्त्रों की ओर परख कर देखा।

तब उसे यह साहस बंधा कि उसके उन चीथड़ों को देख उसको अमुक व्यक्ति के रुप में कोई भी नहीं पहचान सकता। यह विचार कर वह मशालचियों के समीप पहुँचा।

सुबाहू उनके निकट पहुँचा ही था कि उस बीच मशालचियों के चारों तरफ घिरे हुए व्यक्तियों में से एक ऊँची आवाज़ में चिल्ला उठा, "लो, देखो, कोई भिखारी आ रहा है! अरे भिखमंगे? भविष्य में तुम्हें भीख मांगकर खाने की आवश्यकता नहीं। सवेरा होने के पहले हम वीरपुर को लूटने जा रहे हैं। तुम हमारे साथ चलोगे तो तुम्हें भी दस-बारह पीढ़ियों के लिए आवश्यक धन व माल मिल जाएगा! क्यों, चलोगे न?"

ये बातें सुनकर सुबाहू चकित रह गया, फिर संभलकर बोला, "हाँ, साहब! मैं भी आप लोगों के साथ वीरपुर चलूँगा। मुझे वेतन की आवश्यकता नहीं है। भरपेट खाना मिल जाये तो बहुत है।"

वह व्यक्ति सुबाहू से कुछ कहने को हुआ, उसी समय कुछ घुड़सवार तेज़ी से उधर आ निकले और चिल्ला उठे, "महाराजा सर्पकेतु की जय।" फिर थोड़ी देर रुक कर बोले, "तुम लोगों के बीच यदि कुछ वीरपुर के निवासी हों तो अभी जांच कर लो! बाद में पछताने पर कोई लाभ नहीं है।"

उस भीड़ में से एक व्यक्ति सुबाहू की ओर इशारा करके बोला, "यहाँ के हम सब लोग एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित हैं। इसलिए किसी पर संदेह नहीं किया जा सकता। पर एक आदमी हमें रास्ते में मिला था। उसकी अवस्था पर तरस खाकर हमने उसे अपने साथ ले लिया। उसकी अच्छी प्रकार से जांच-पड़ताल कर लेना ही ठीक होगा। यह आदमी कोई नया है और देखने में कोई भिखारी जैसा लगता है। अभी-अभी यहाँ पर आया है।"

इसपर सभी घुड़सवार एक दूसरे के चेहरों की ओर देख चिल्ला उठे, "अबे!" और सुबाहू की ओर अपने घोड़ों को हांक दिया।

(क्रमशः)

डाकू उग्रशील

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से शव उतार कर कन्धे पर डाल कर शमशान की ओर चलने लगे, तब शव में वास करने वाले बेताल ने कहा, "राजन, साधारणतया मनुष्य अपनी आजीविका तथा उन्नति के लिए श्रम करता है, मेरे मन में इस बात का संदेह हो रहा है कि इस आधी रात के समय आप जो श्रम कर रहे हैं, वह निश्चय ही उपयुक्त उद्धेश्यों की पूर्ति के लिए नहीं है, पर कुछ राजा वक्र बुद्धिवाले होते हैं। उनके मन में जिस पल में जो सूझता है, उसी को वे उत्तम पद्धति मानते हैं, लेकिन वह पद्धति जनता को मुसीबतों में फंसा सकती है। इसके उदाहरण के रुप में मैं आपको उग्रशील नामक एक डाकू की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल कहानी सुनाने लगाः मणिकर्णिका नामक देश पर राजा सत्येंद्र राज्य करते थे। उस देश के जंगल के पहाड़ों में उग्रशील नामक एक

बेताल कथा

डाकू रहता था। वह अपने अनुचरों के साथ वहाँ की गुफ़ाओं में गुप्त जीवन बिताया करता था। वे लोग न केवल राहगीरों को लूटते थे, बल्कि सुदूर गाँवों पर भी आक्रमण करके वहाँ के घरों को लूट लेते थे और अपने गुप्त केंद्रों में लौट आते थे। वे लोग लूटने के लिए जाते समय नकाब पहन लेते थे। इस कारण से लोग उग्रशील को लुटेरों के नेता के रुप में अवश्य जानते थे, लेकिन किसीने भी उसकी शक्ल-सूरत न देखी थी।

उग्रशील की पत्नी अपने पति की लूट-खसोट और चोरी व डाकों से घृणा करती थी। वह चाहती थी कि उसका पति औरों की भांति एक नेक इन्सान बने। जिस तरह वह उसके चोरी-डकैती से घृणा करती है, उसी तरह अनेक लोग उसका नाम सुनते ही घृणा और ग्लानि से भर जाते होंगे। वह उसके इन कर्मों से घृणा करती थी। वह केवल समझा सकती थी। शेष तो उग्रशील के ऊपर निर्भर करता था कि वह क्या निर्णय लेगा। उसने कई बार अपने पति को समझाया कि हम लोग इस गुप्त जीवन से निकलकर सामान्य प्रजा की तरह अपने दिन बितायेंगे। पर इस के उत्तर में उग्रशील हँसकर कहा करता था, "इस जीवन में अब डाकू के रुप में ही जीना संभव है, किसी अन्य प्रकार से नहीं।"

उग्रशील के विवाह के पच्चीस वर्ष बाद उस के एक पुत्र हुआ। पुत्र-जन्म के साथ उसके मन में अपार वात्सल्य और प्रेम उमड़ा। वह अपने बेटे को प्राणों से अधिक मानता था। कभी-कभी वह दूर-दूर के गाँवों को लूटने के लिए चला जाता तो उसके घर लौटने में चार-पांच दिन लग जाते थे। उस अवस्था में उग्रशील उदास और अन्यमनस्क दिखाई देता था। उसके भीतर पहले की क्रूरता और जोश-आवेश नज़र नहीं आते थे। डाकू जिन घरों को लूटते, उन घरों में यदि उसे बच्चे दिखाई देते तो उनको गोद में लेकर चूम लेता था, प्यार करता था और पुचकारता था। यह व्यवहार उसके अनुचरों को बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था।

उसके अनुचर उग्रशील को कभी-कभी

समझाया करते थे, "इस प्रकार हम प्यार-पुचकारों में डूब जाते हैं तो किसी न किसी दिन हम राजभटों के हाथों में बन्दी बन जायेंगे। क्या तुम्हारे ही घर बच्चे हैं? हमारे घरों में नहीं हैं? चोर-डाकुओं के अन्दर यह प्रवृति अत्यन्त घातक होती है। अपने मन पर पत्थर रखना पड़ता है। जब वापस लौटते हो तब तो तुम्हें तुम्हारा बेटा मिल ही जाता है, फिर पराये बच्चों से ऐसा मोह क्यों ?"

उग्रशील प्रयत्न करने के बाद भी अपनी इस आदत को बदल न सका। एक बार उसका दल एक ऐसे सुदूर गाँव को चल पड़ा जिसे उन लोगों ने कभी नहीं लूटा था। वहाँ तक घोड़ों पर यात्रा करके पहुँचने में चार दिन लगते थे। वे लोग रातों में यात्रा करते और दिन के समय पेड़ों की छाया में विश्राम करते थे।

एक दिन दुपहर के समय उग्रशील एक बरगद की छाया में सो रहा था। उसने नींद में एक सपना देखा। उस सपने में राजभट उसका पीछा कर रहे थे। उस अवस्था में उग्रशील का घोड़ा एक पेड़ की ठूँठ से ठोकर खाकर नीचे गिर पड़ा। उग्रशील भी घोड़े के साथ गिर पड़ा, फिर उठकर तेज़ी के साथ भागने लगा। लेकिन एक घोड़े पर उस का पीछा करने वाले राजभट ने निशाना लगा कर उस पर भाला फेंका। भाला उग्रशील की पीठ में धंस गया। वह पीड़ा के मारे औंधे मुँह गिर पड़ा। उस समय उसे उस का तीन महीने का लड़का और उसकी पत्नी एक पहाड़ी चोटी से घाटी में गिरते हुए दिखाई दिये।

उग्रशील उस दृष्य को देख चीख कर उठ

बैठा और आपाद मस्तक कांप उठा। उसके मन में यंह डर समा गया कि उसने जो सपना देखा, वह भविष्य में सच होने वाला है। चोरी करने वाला व्यक्ति कभी न कभी पकड़ा जायेगा। ऐसी अवस्था में उसकी पत्नी और बच्चे का क्या होगा ?

उग्रशील ने इस प्रकार विचार किया, फिर थोड़ी दूर पर सोनेवाले अपने दस अनुचरों को जगाकर उन से बोला, "चलो, हम लोग यहीं से अपने घर वापस चले जायेंगे।"

उग्रशील के मुँह से यह सुनकर उसके अनुचर चक़ित रह गये, फिर उन्होंने पूछा, "यह कैसी बात है ? आज तक हम लोग बिना लूटे घर वापिस नहीं लौटे !"

उग्रशील का चेहरा लाल हो उठा। उसने म्यान से तलवार खींचते हुए गरज कर कहा, "मैं तुम लोगों का सरदार हूँ। यह मेरा आदेश है।"

इसपर अनिच्छापूर्वक सभी डाकू अंधेरा फैलने के पूर्व अपने निवासों को लौट आये। यह देख उन की पत्नियाँ और बच्चे आश्चर्य में आ गये। अपने पतियों के हाथ खाली देख वे कुछ-कुछ प्रश्न पूछने लगे। मगर डाकुओं ने उन प्रश्नों को टाल-मटोल कर दिया।

इसके बाद उग्रशील ने सब अनुचरों को एक स्थान पर इकट्ठा करके समझाया, "हम लोग मनुष्य होकर भी खूँख्वार जानवरों के जैसा जीवन बीता रहे हैं। हमारी सन्तान को इसी प्रकार का जीवन प्राप्त नहीं होना चाहिए। इसलिए सवेरा होते ही हमलोग राजधानी पहुँचकर राजभटों के हाथों में समर्पण कर देंगे। हमें भले ही अपने अपराधों के लिए सज़ा मिले पर हमारे परिवारों को स्वेच्छा पूर्वक जीने का अवसर तो मिलेगा।"

इस प्रस्ताव का अन्य लोगों ने विरोध किया, साथ ही उग्रशील से साफ़ कह दिया, "हमलोगों ने आज तक जो भयंकर अपराध किये हैं, उनके आधार पर राजा हमें कठिन दण्ड देंगे। इसलिए हम जंगल को छोड़ कर आप के साथ नहीं जायेंगे।"

"तब तुम लोगों की जो इच्छा है सो करो। मैं अपने को राजभटों के हाथों में सौंप दूँगा।

तुम लोग जल्दबाजी में न आकर शांति के साथ सोच लो और कल सुबह तक अपना निर्णय मुझे सुना दो," उग्रशील ने यों अपने अनुचरों को परामर्श दिया ।

अपने पति के अन्दर यह परिवर्तन देखकर उग्रशील की पत्नी बहुत प्रसन्न हुई ।

उग्रशील के प्रस्ताव का उसके अनुचरों ने विरोध किया, इसपर उसे बड़ा क्रोध आया । उस दिन रात को वह शांति पूर्वक सो नहीं पाया । रात के तीसरे पहर में वह घर से बाहर निकला । बाहर ठण्डी हवा चल रही थी । वह विचारों में लीन था और निर्णय नहीं ले पा रहा था । उसके अनुचरों को उसका प्रस्ताव ठीक नहीं लगा, तो क्या उन सब से उसी को अलग होना पड़ेगा ? क्या ऐसा सम्भव हो सकेगा ? वह एक पेड़ के नीचे अन्धेरे में जा खड़ा हुआ । थोड़ी दूर पर अन्धेरे में उसके दो अनुचर वार्तालाप कर रहे थे । उनकी बातचीत को उग्रशील ने ध्यान से सुना ।

उसका एक अनुचर कह रहा था, "एक पुत्र के पैदा होने के बाद उग्रशील के अन्दर भारी परिवर्तन हो गया है । राजभटों के हाथों में वह अपने को समर्पित करेगा तो उसको नाना प्रकार से सताकर राजभट हम लोगों का रहस्य जान लेंगे । इसलिए उग्रशील के नींद से जागने से पहले ही उसके सारे परिवार को समाप्त कर डालेंगे ।"

"मैं तुम्हारे विचार का समर्थन करता हूँ ।

हम अपना यह निर्णय और साथियों को सुनाकर उनकी भी सहायता लेंगे," दूसरे अनुचर ने कहा ।

इस वार्तालाप को सुनकर उग्रशील ने समझ लिया कि उसके तथा उसके परिवार के लिए खतरा पैदा होने वाला है । फिर क्या था, वह उसी समय अपनी पत्नी व बच्चों को जगाकर थोड़ा बहुत धन, कपड़े व सामान घोड़े पर लाद कर राजधानी के लिए चल पड़ा ।

दो दिन बाद उग्रशील सूर्यास्त के समय तक राजधानी के समीप पहुँचा । उसने एक स्थान पर अपने घोड़े को रोक दिया । अपनी पत्नी और बच्चे को साथ लेकर पैदल चल कर राजधानी में पहुँचा । कई वर्षों तक जंगल का जीवन

बिताने वाली उग्रशील की पत्नी को लोगों की भीड़ के बीच चलना कुछ कठिन मालूम हुआ।

उस दिन रात को वे लोग सराय में ठहर गये। आधी रात के समय उग्रशील अपनी पत्नी से बोला, "मैं सवेरा होते ही राजभटों के हाथों में आत्म-समर्पण करूँगा।"

यह बात सुनकर उग्रशील की पत्नी घबरा गई और बोली, "हम लोगों को इस जन-समुद्र में छोड़कर तुम कारागार में जा बैठोगे तो हमारा क्या होगा? चाहो तो हम दोनों को जहर पिला कर तब यहाँ से चले जाओ।"

अब उग्रशील के सामने एक जटिल समस्या पैदा हो गई। वह अपने साथ जो धन लाया था, उस पूँजी से वह नगर में कोई व्यापार करके आनन्द से अपने दिन बिता सकता था, लेकिन वह डाकू उग्रशील था। यह बात आखिर कितने दिन तक गुप्त रह सकती है? कभी न कभी यह रहस्य खुल ही जाएगा। जब यह रहस्य खुलेगा तब उस समय राजा उसको इससे भी भयंकर दण्ड देगा। ऐसा न होकर सीधे वह राजा के सामने पहुँच कर आत्म-समर्पण कर देगा तो हल्की सज़ा मिल सकती है। यही विचार उसे उचित प्रतीत हुआ।

उग्रशील यों विचार कर अपनी पत्नी और बच्चे को गहरी नींद में छोड़ कर सराय से निकल पड़ा। वह एक कुशल डाकू था, इसलिए राजभटों की आँखों में धूल झोंक कर राजा के कमरे में प्रवेश करने में उसे कोई परेशानी नहीं हुई। लेकिन वह ज्यों ही राजा के पलंग तक पहुँचा, त्यों ही उसका पैर एक थाली से टकरा गया। थाली के गिरने की आवाज़ सुनकर राजभट, "चोर! चोर!" चिल्लाते हुए राजा के कमरे तक दौड़ आये और उग्रशील को पकड़ लिया।

राजा भी वह आवाज़ सुनकर नींद से जाग कर चारपाई पर उठ बैठे। उग्रशील घबरा गया और चिल्लाने लगा कि वह चोरी करने के लिए राजमहल में नहीं घुसा था।

राजा सत्येंद्र ने सिपाहियों को आदेश दिया, "तुम लोग उसकी तलाशी ले लो। उसके पास न मालूम क्या-क्या हथियार होंगे।"

सिपाहियों ने उग्रशील की तलाशी ली,

परन्तु उसके पास से कोई भी हथियार नहीं मिला ।

"इस को यहीं पर छोड़ कर तुम लोग चले जाओ," राजा ने सिपाहियों को आज्ञा दी ।

सिपाहियों के चले जाने के बाद राजा ने उग्रशील से पूछा, "यदि तुम चोरी करने नहीं आये तो किसलिए आये ? तुम छिप कर क्यों आये ? इसका क्या उद्धेश्य है ?"

उग्रशील ने सर झुका कर राजा को प्रणाम किया फिर बोला, "महाराज, मैंने जो अपराध किये हैं, उनकी सज़ा पाने के लिए आया हूँ । यदि मैं राजभटों के हाथों में आत्मसमर्पण करूँगा तो खुले आम मेरी सुनवाई होगी, ऐसी अवस्था में मेरी पत्नी और पुत्र को सबके सामने अपमानित होना पड़ेगा ।" यह उत्तर देकर उग्रशील ने राजा को अपना सारा वृतान्त सुनाया ।

राजा ने उसकी बातें ध्यान से सुनीं, संतुष्ट होकर सर हिलाया, फिर बगल के कमरे से एक थैली लेकर आये और बोले, "उग्रशील, इस थैली में सौ सोने के सिक्के हैं । तुम्हें अगले साल ठीक इसी दिन मुझे दो सौ सिक्के लाकर देने होंगे । पर ध्यान रखो, तुम्हारी वह कमाई मेहनत की हो ।" यह कहकर राजा ने उग्रशील के हाथ में थैली रख दी ।

इसके बाद उन्होंने ताली बजाकर सिपाहियों को बुलाया और उन्हें आदेश दिया, "तुम लोग इस को आदर के साथ ले जाकर राजपथ पर

छोड़ दो ।" सिपाहियों ने ऐसा ही किया ।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा, "राजन, डाकू उग्रशील जब राजा सत्येंद्र के हाथ में आया, तब राजा ने उसे दण्ड न देकर उल्टे एक सौ सोने के सिक्के देकर भेज दिया । क्या यह उनकी वक्र बुद्धि का परिचायक नहीं है ? इस बात का क्या प्रमाण है कि उग्रशील भविष्य में चोरी और लूट मार नहीं करेगा ? राजा के यहाँ तो अनेक राजभट और पहरेदार होते हैं, इसलिए वे चोर और डाकुओं के डर से मुक्त रह सकते हैं । राजा उसे अपने यहाँ नौकर रख सकता था ऐसा न करके उन्होंने उग्रशील के लिए कार्य आसान क्यों कर दिया ? लेकिन साधारण नागरिकों की बात क्या होगी ?

एक बात और भी है— हम यह मान भी लें कि उग्रशील के अन्दर परिवर्तन आया है, पर जंगल में वास करने वाले उसके दल का क्या होगा ? इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा मालूम होता है कि राजा ने तत्काल जो मन में आया, वही निर्णय लिया । इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।''

इसपर विक्रमार्क ने उत्तर दिया, ''राजा सत्येंद्र ने डाकू उग्रशील को दण्ड न देकर उसे मुक्त करके बड़ी विद्धता का परिचय दिया है। वास्तव में दण्ड देने का उद्धेश्य अपराधी को अपनी गलती महसूस कराना और उसके भीतर परिवर्तन लाना है। उसे धन देकर वे उसे मेहनत और बल से नौकरी करने के लिए चुनौती दे रहे थे। उसे शारीरिक दृष्टि से सताना नहीं हैं। उग्रशील अपने अनुचरों के परामर्श का तिरस्कार करके अपने किये हुए अपराधों के लिए दण्ड भोगने के लिए ही राजधानी में आया। यह इस बात का प्रमाण है कि वह भविष्य में कभी चोरी न करेगा और डाका न डालेगा। उसने अपना सारा वृतान्त राजा को सुनाया जिससे राजा को मालूम हो गया कि डाकू उग्रशील के अनुचर जंगलों में कहाँ पर निवास करते हैं। वे लोग कभी न कभी अवश्य जान जायेंगे कि राजा ने उनके सरदार को क्षमा करके छोड़ दिया है। इसलिए राजा धर्मात्मा है। तब वे लोग भी राजा के सम्मुख आकर उग्रशील की भांति क्षमा मांग सकते हैं। यदि ऐसा न हुआ तो भी राजा अपने सैनिकों को भेज कर उनको बन्दी बना सकते हैं। इन कारणों से हम यह मान सकते हैं कि राजा वक्रबुद्धि वाले नहीं और वे बिना सोचे विचारे जल्दबाजी में आकर निर्णय नहीं लेते हैं। बल्कि वे अत्यन्त तार्किक दृष्टि रखने वाले और विवेकशील राजा हैं। इसीलिए उन्होंने उग्रशील को धन देकर राज्य से बाहर भेजने का निर्णय लिया।

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृष्य होकर पेड़ पर जा बैठा।

—(कल्पित)

दवा और तावीज़

वल्लभपुर गाँव में सुधीर और विशालाक्षी नामक दम्पति रहा करते थे। एक बार उनका पांच साल का लड़का बीमार पड़ गया। उस गाँव में कोई अच्छा वैद्य न था। इसलिए वे पड़ोसी गाँव के एक नामी वैद्य के पास लड़के को ले गये। वैद्य ने लड़के की बीमारी की जाँच की और एक सप्ताह के लिए दवा दी।

एक सप्ताह बीत गया पर लड़का स्वस्थ न हुआ। विशालाक्षी की चिन्ता बढ़ गई। वैद्य की दवा पर से उसका विश्वास उठ गया। उसी गाँव में श्यामनाथ नाम एक देवी-उपासक रहता था। वह मंत्र फूंक कर बीमार लोगों को तावीज़ बांधा करता था। उसपर विशालाक्षी का अपार विश्वास था। वह हर शुक्रवार को देवी की पूजा करके तावीज़ दिया करता था। उस दिन श्यामनाथ के घर पर बड़ी भीड़ लग जाती थी। दूर-दूर के गावों से लोग उसके यहाँ आया करते थे। विशालाक्षी ने अपने पति को समझाया कि वह श्यामनाथ के यहाँ जाकर तावीज़ ले आवे।

"यह तो भोले-भाले और अबोध लोगों का काम है। मैंने इसके पूर्व कई बार श्यामनाथ के यहाँ जाने वाले व्यक्तियों से बातचीत की है। वे लोग अन्धविश्वास रखते हैं। जिस बीमारी को दवा दूर नहीं कर सकती, क्या उसको तावीज़ दूर कर सकता है? मैं फिर वैद्य के पास जाऊँगा, उनको बीमारी का विवरण सुना कर दवा ले आऊँगा। तुम घबराओ मत," सुधीर ने अपनी पत्नी को समझाया।

सुधीर जब वैद्य के घर पहुँचा, तब वह घर पर न था। उसको घरवालों से मालूम हुआ कि वैद्य की पत्नी कई दिनों से बीमार है। दवाइयों का उस पर कुछ असर न हुआ, इसलिए वह सुधीर के गाँव में देवी-उपासक श्यामनाथ से तावीज़ लेने के लिए गया हुआ है।

यह बात सुनकर सुधीर के आश्चर्य की कोई

अजय चक्रवर्ती

एक बात और भी है— हम यह मान भी लें कि उग्रशील के अन्दर परिवर्तन आया है, पर जंगल में वास करने वाले उसके दल का क्या होगा ? इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा मालूम होता है कि राजा ने तत्काल जो मन में आया, वही निर्णय लिया । इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

इसपर विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "राजा सत्येंद्र ने डाकू उग्रशील को दण्ड न देकर उसे मुक्त करके बड़ी विद्धता का परिचय दिया है। वास्तव में दण्ड देने का उद्धेश्य अपराधी को अपनी गलती महसूस कराना और उसके भीतर परिवर्तन लाना है। उसे धन देकर वे उसे मेहनत और बल से नौकरी करने के लिए चुनौती दे रहे थे । उसे शारीरिक दृष्टि से सताना नहीं हैं । उग्रशील अपने अनुचरों के परामर्श का तिरस्कार करके अपने किये हुए अपराधों के लिए दण्ड भोगने के लिए ही राजधानी में आया । यह इस बात का प्रमाण है कि वह भविष्य में कभी चोरी न करेगा और डाका न डालेगा । उसने अपना सारा वृतान्त राजा को सुनाया जिससे राजा को मालूम हो गया कि डाकू उग्रशील के अनुचर जंगलों में कहाँ पर निवास करते हैं । वे लोग कभी न कभी अवश्य जान जायेंगे कि राजा ने उनके सरदार को क्षमा करके छोड़ दिया है। इसलिए राजा धर्मात्मा है। तब वे लोग भी राजा के सम्मुख आकर उग्रशील की भांति क्षमा मांग सकते हैं। यदि ऐसा न हुआ तो भी राजा अपने सैनिकों को भेज कर उनको बन्दी बना सकते हैं । इन कारणों से हम यह मान सकते हैं कि राजा वक्रबुद्धि वाले नहीं और वे बिना सोचे विचारे जल्दबाजी में आकर निर्णय नहीं लेते हैं । बल्कि वे अत्यन्त तार्किक दृष्टि रखने वाले और विवेकशील राजा हैं। इसीलिए उन्होंने उग्रशील को धन देकर राज्य से बाहर भेजने का निर्णय लिया ।

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृष्य होकर पेड़ पर जा बैठा ।

—(कल्पित)

दान की महिमा

काशी राज्य पर ब्रह्मदत का शासन था। बोधिसत्व उनके यहाँ कोशाध्यक्ष थे। वे अस्सी करोड़ स्वर्ण मुद्राओं के अधिपति थे। संसार के प्रति उनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ। उन्होंने सोचा कि अब संसार के मायाजाल को त्याग देना चाहिए। इसलिए उन्होंने राजा से निवेदन किया कि वे उनकी सारी सम्पति को स्वीकार कर लें।

"मेरे पास धंन की कोई कमी नहीं है। इसलिए आप अपने धन का उपयोग अन्य प्रकार से कर लीजिए," राजा ने उत्तर दिया। इस के बाद कोशाध्यक्ष ने राजा की अनुमति लेकर काशी नगर में छः धर्मशालाएँ खोल दीं। यहाँ पर गरीबों के लिए भोजन का प्रबन्ध था और साथ ही वहाँ दान भी दिया जाता था। इन धर्मशालाओं पर प्रति दिन एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ खर्च हो जातीं थीं।

अन्न शालाएँ चलाने के फल स्वरुप अपनी मृत्यु के बाद कोशाध्यक्ष को स्वर्ग में इंद्र का पद प्राप्त हुआ। उसका पुत्र भी पिता के चरण-चिह्नों पर चलकर चंद्र के रुप में पैदा हुआ। चंद्र का पुत्र सूर्य के रुप में पैदा हुआ। सूर्य का पुत्र मातलि के रुप में और मातलि का पुत्र पंच शिखाग्नि के रुप में पैदा हुआ। इस प्रकार उन सबने देवत्व प्राप्त किया। उन सब के पास धन के साथ-साथ कोमल हृदय तथा दान-कर्म की भावनाएँ थी। धन ने इनके कर्म नहीं बदले थे। यही कारण था कि उन सबको देवत्व प्राप्त हुआ।

पर पंच शिखाग्नि के पुत्र तक पहुँचते-पहुँचते उस वंश का आचार और धर्म-कर्म समाप्त हो गया। दान-धर्म के सारे कार्यक्रम बन्द कर दिये गये। इसका कारण था कि पंच शिखाग्नि का पुत्र अस्सी करोड़ मुद्राओं का अधिपति होते हुए भी बहुत कंजूस था। जनता उसको मच्छरिकोशिय कहकर पुकारती थी। उसने

अपने पिता की मृत्यु के होते ही सारी धर्मशालाओं को बन्द करवा दिया जहाँ पर अन्नदान की व्यवस्था थी। साथ ही उन इमारतों को जलवा डाला। उस का विश्वास था कि उसके पूर्वज मूर्ख थे, इसलिए दान-धर्मों के पीछे बहुत सारा धन व्यय कर डाला था। वह इन सब कार्यों में विश्वास नहीं रखता था, इसलिए उसने इन सब कार्यों को बन्द कर दिया।

अन्न शालाओं के बन्द होते ही नगर के सभी गरीब लोग मच्छरिकोशिय के घर के सामने इकट्ठे हो कर विनती करने लगे, "महानुभाव, कृपया दान देने का क्रम बन्द न कीजिए। अन्न शालाओं को फिर से चालू कर दीजिए। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो हम गरीब लोगों को बहुत कष्ट होगा।" पर इस विनती का असर मच्छरिकोशिय पर कुछ भी न पड़ा, उल्टे उसने अपने नौकरों के द्वारा उन गरीबों को अपने घर के सामने से हटवा दिया।

मच्छरिकोशिय भी करोड़पति था और वह भी अपने बाप-दादों की भांति राजा के यहाँ कोशाध्यक्ष था। पर वह अपना धन खर्च करके सुख वैभव का जीवन नहीं बिताता था। वह न स्वयं भर पेट खाता था और न अपनी पत्नी और बच्चों को भरपेट खिलाता था। वह थोड़ा सा प्याज़-मिर्च मिला कर रोटी खा लेता और खट्टा छाछ पी लेता था। तन पर वल्कल पहन लेता था और घिसी हुई धुरी वाली पुरानी गाड़ी में कमज़ोर बैलों को जुतवाकर आता-जाता था। इस प्रकार जीवन बीताते हुए उसे धन व्यय करने की आदत ही नहीं रही थी।

एक दिन वह कंजूस कोशाध्यक्ष राजदरबार में जाते हुए सहायक कोशाध्यक्ष को भी अपने साथ राजसभा में ले जाने के विचार से उसके घर पहुँचा। ठीक उसी समय सहायक कोशाध्यक्ष अपनी पत्नी और बच्चों के साथ पत्तलों के सामने बैठकर हलुआ खा रहा था। कोशाध्यक्ष को देखते ही सहायक कोशाधिपति उठ खड़ा हुआ और उसको भी हलुआ खाने को आमंत्रित किया।

मच्छरिकोशिय यह सोचकर डर गया कि इस समय यदि मैं इसके आतिथ्य को स्वीकार करके हलुआ खा लूँगा तो किसी न किसी दिन

इसके सारे परिवार को निमंत्रित करके दावत देनी पड़ेगी । यों विचार करके वह बोला, "मित्र, इस समय मुझे भूख नहीं है । अभी थोड़ी देर पहले मैं भरपेट खा चुका हूँ । तुम लोग खा लो ।"

लेकिन उसी क्षण से मच्छरिकोशिय के मन में हलुआ खाने की तीव्र इच्छा पैदा हो गई, पर यदि घर में हलुआ बनवाया गया तो उसके साथ और कई लोग हलुआ खायेंगे । इस विचार से उसने घर वालों के सामने अपनी यह इच्छा प्रकट नहीं की और मन ही मन घुलते हुए आख़िर बीमार पड़ गया ।

मच्छरिकोशिय की पत्नी ने पूछा, "क्या आप अस्वस्थ हो गयें हैं ? दवा-दारु क्यों नहीं कराते ?"

"तुम ही बीमार पड़ गई हो । मैं तो बिल्कुल स्वस्थ हूँ," मच्छरिकोशिय ने उत्तर दिया । पर पत्नी ने कई सवाल करके अन्त में अपने पति के मन की बात ताड़ ली और कहा, "हम कंगाल थोड़े ही हैं ! हलुआ के लिए बीमार पड़ने की क्या आवश्यकता है ? मैं काशी नगर की सारी जनता को हलुआ खिलाऊँगी । सब लोग भर पेट खाकर प्रसन्न हो जायेंगे ।"

"हाँ हाँ ! मैं जानता हूँ, तुम्हारे पीहर के लोग बड़े ही धनी हैं । वहाँ से धन लाकर सारे नगर के लोगों को हलुआ की दावत खिलाओ !" कंजूस पति ने ताने मारे । इस पर उसकी पत्नी ने सुझाव दिया, "कम से कम अपनी गली के लोगों के लिए हलुआ बनाऊँगी ।" इस प्रस्ताव का भी मच्छरिकोशिय ने विरोध किया ।

"अच्छी बात है, मैं हम दोनों के लिए हलुआ बना लेती हूँ ।" पत्नी ने कहा ।

"तुम्हारे लिए क्या आवश्यकता है ?" पति ने टोका । "तो फिर केवल तुम्हारे लिए बनाऊँगी । ठीक है न ?" पत्नी ने पूछा ।

"वास्तव में किसी भी अवस्था में घर में हलुआ नहीं बनाना है, समझीं । तुम थोड़ा आटा, दूध, घी और शहद मुझे दे दो, बर्तन भी दे दो । मैं जंगल में जाकर हलुआ बनाकर खा लूँगा," पति ने कहा ।

पत्नी ने सारी चीज़ें लाकर मच्छरिकोशिय के हाथ में दे दीं । उन चीजों को एक गुलाम के सर
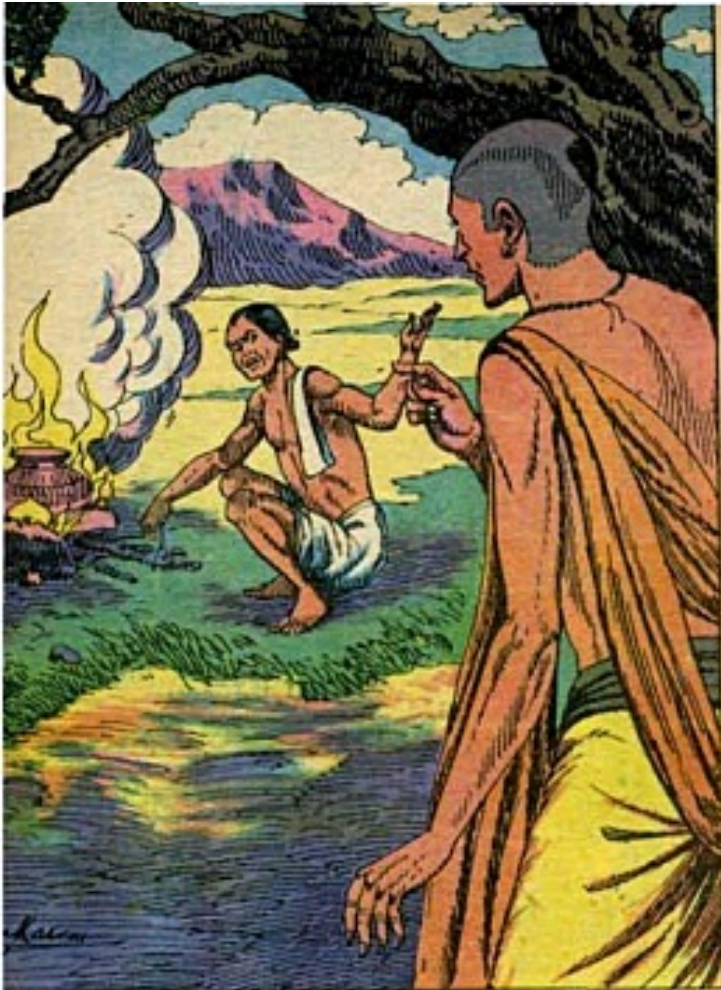
पर रखवा कर, मच्छरिकोशिय अपने चेहरे पर नक़ाब डालकर, नदी के किनारे से होकर जंगल में चला गया। नदी के किनारे एक झाड़ी के निकट चूल्हा बनाया, अपने नौकर के द्वारा जलावन और पानी मंगवा लिया। तब उसे आदेश दिया, "तुम जाकर रास्ते पर खड़े हो जाओ। यदि इस रास्ते से कोई गुज़रे तो मुझे तुरन्त सूचना दो। यदि मुझे तुमसे कोई काम आ पड़ा तो मैं तुम्हें पुकार लूँगा। तब तक तुम मेरे पास नहीं आना। समझे !"

इस बीच इंद्र ने अपनी छठी पीढ़ी के मच्छरिकोशिय के बारे में सारा समाचार जान लिया था।

इंद्र ने सोचा, "पंच शिखाग्नि की पीढ़ियों के लोग दान-पुण्य करके देवत्व को प्राप्त हो गये, पर उसका पुत्र कंजूस व मक्खीचूस बन गया। अपने वंश के आचार को तिलांजली देकर स्वयं हलुआ खाने के लिए जंगल में जाकर बना रहा है। यदि मैं इस को ज्ञानोदय न कराऊँ तो यह निश्चय ही नरक में चला जायेगा।" यों विचार करके इंद्र ने चंद्र, सूर्य, मातलि तथा पंच शिखाग्नि को बुलवा भेजा और उन्हें अपने आगे के कार्य का परिचय दिया।

इसके बाद इंद्र एक ब्राह्मण का वेष धर कर मच्छरिकोशिय के पास पहुँचा, जहाँ पर वह हलुआ बना रहा था और पूछा, "सुनो, काशी जाने वाला रास्ता किस ओर है ?"

"तुम्हें काशी जाने वाले रास्ते का पता नहीं हैं ? इस ओर क्यों आये ? यहाँ से निकल जाओ !" मच्छरिकोशिय चिल्ला उठा।

"चिल्लाते क्यों हो ? ओह, हलुआ बना रहे हो ? शायद ब्राह्मणों के लिए भोज देने वाले हो ! उन की पंक्ति में मैं भी बैठ जाता हूँ," इंद्र ने हँसते हुए कहा।

"भोज दावत कुछ भी नहीं है। जाओ, यहाँ से हट जाओ। चलो, निकलो।" मच्छरिकोशि-य ने डांटा।

"बेटा, नाराज़ क्यों होते हो ? मैं अभ्यागत हूँ। तुमने जो कुछ बनाया, उसमें से थोड़ा मुझे भी खिलाओ, तो तुम्हारा पुण्य होगा। पाप नही होगा।" इंद्र ने कहा।

"मैं तुम्हें एक दाना भी नहीं खिलाऊँगा। यह हलुआ जो बनाया गया है, मेरे लिए भी

पर्याप्त नहीं है। मैं स्वयं याचना करके यह सामान ले आया हूँ। इस में से तुम्हें भी भीख दूँ ? यह नहीं हो सकता," मच्छरिकोशिय ने साफ़ कह दिया।

"उस थोड़े में से मुझे थोड़ा दान कर दो। अधिक हो तो अधिक दान करो। अकेले कभी नहीं खाना चाहिए। यदि तुम ऐसा न करोगे तो तुम्हें नरक-वास मिलेगा, परन्तु दान करने से तुम्हें उत्तम लोकों की प्राप्ति होगी।" इस प्रकार इंद्र ने उसको उपदेश दिया। मच्छरिकोशिय बोला, "अच्छी बात है! वहाँ पर बैठ जाओ। तुम्हें भी थोड़ा सा हलुआ दे दूँगा।"

इतने में वहाँ पर चंद्र भी ब्राह्मण के वेष में आ पहुँचा और उसने भी हलुआ की याचना की। मच्छरिकोशिय को लाचार होकर उसको भी बैठने को कहना पड़ा। इसके बाद क्रमशः सूर्य, मातलि और पंचशिखाग्नि भी ब्राह्मणों के वेष में आये और जम कर बैठ गये।

शीघ्र ही हलुआ बन गया। इस पर मच्छरिकोशिय ने सबको सम्बोधित कर कहा, "तुम लोग पत्तल लेते आओ। हलुआ परोस देता हूँ।" ब्राह्मणों ने अपने हाथ फैलाये, बस, उनके हाथों में गाड़ी के पहियों के बराबर के कमल पत्र प्रत्यक्ष हुए।

"मैं इतने बड़े पतलों में नहीं परोसूँगा। मंदार जैसे पत्तों को लेकर आओ," मच्छरिकोशिय ने कहा। इस पर वे मंदार के पत्ते ले आये, लेकिन वे पत्ते भी केले के पत्तों के बराबर थे। मच्छरिकोशिय अब कर भी क्या सकता
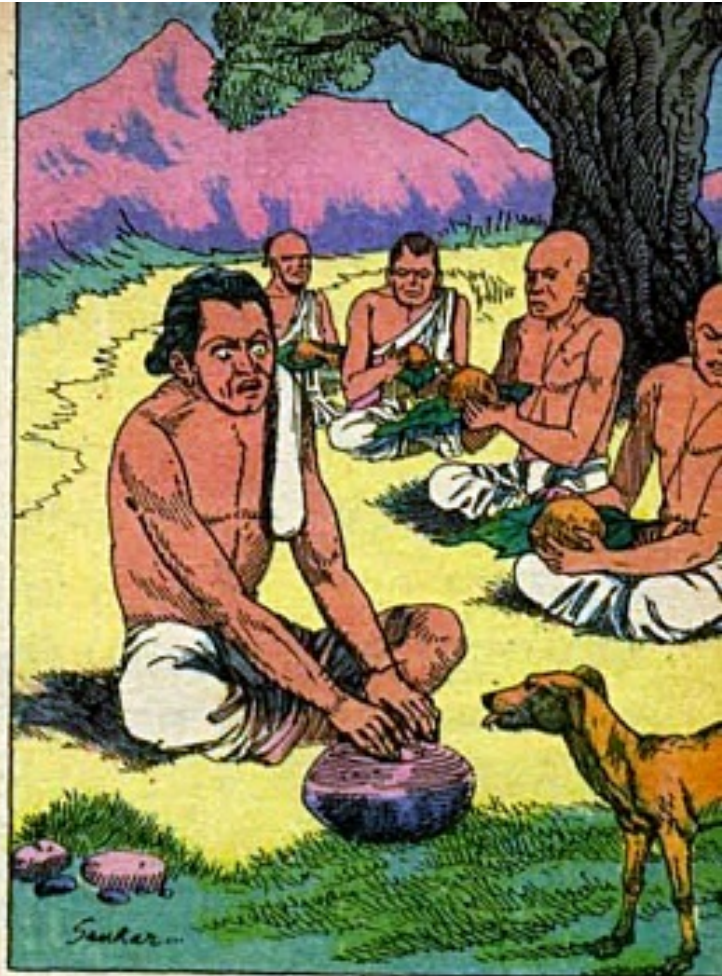
था। अंत में उस ने उन पत्तों पर हलुआ परोस दिया। उन सब को परोसने के बाद भी बर्तन में बहुत सा हलुआ बच गया था।

इतने में पंच शिखाग्नि कुत्ते का रुप धर कर उस पात्र में अपना मुँह डालने को हुआ। समय पर मच्छरिकोशिय ने अपने हाथों से बर्तन को ढक दिया। फिर भी उसके हाथों पर कुत्ते का झूठन छू गया।

उसने ब्राह्मणों से कहा, "मेरे हाथ धोने के लिए पानी ले आओ।" पर उन लोगों ने साफ़ कह दिया, "हम लोग पानी नहीं लायेंगे।"

"तुम लोगों ने मेरा बनाया हुआ हलुआ खाया। मेरे प्रति तुम लोगों की इतनी कृतज्ञता नहीं है ?" मच्छरिकोशिय ने कहा। इसका

उनपर ज़रा भी असर न पड़ा। पहले तो मच्छरिकोशिय को बहुत क्रोध आया परन्तु अपने आप पर नियंत्रण रखकर वह बोला, "तुम लोग मेरे बर्तन की देखभाल करते रहो। मैं स्वयं पानी ले आता हूँ।" यह कह कर मच्छरिकोशिय पानी लाने के लिए नदी में उतरने लगा। उसी समय कुत्ते ने हलुआ के बर्तन में मुँह डाल दिया।

मच्छरिकोशिय को बहुत क्रोध आया। वह एक लाठी लेकर कुत्ते का पीछा करने लगा। लेकिन इतने में वह कुत्ता घोड़े का रुप धर कर मच्छरिकोशिय का पीछा करने लगा। वह पल-पल में अपना रुप बदलते हुए कभी छोटा और कभी बड़ा दिखाई देने लगा। कभी वह भेड़िया बन जाता तो कभी घोड़ा। इसपर मच्छरिकोशिय प्राणों के भय से थर-थर कांपने लगा। वह उन ब्राह्मणों से प्रार्थना करने लगा, "हे महानुभावों, आप लोग इस घोड़े से मेरी रक्षा कीजिए।"

दूसरे ही क्षण वे लोग अपने असली रुपों में हवा में उड़ कर खड़े हो गए।

"आप लोग मनुष्य नहीं, देवता हैं। आप कृपया यह बताइये कि आप लोग कौन हैं और यहाँ पर किसलिए आये हैं!" मच्छरिकोशिय ने उनसे निवेदन किया।

"हम तुम्हारे पितृदेव हैं। मनुष्य का जन्म धारण करके दान-पुण्य करने के परिणाम स्वरुप देवत्व को प्राप्त हुए हैं। तुम कंजूस बनकर अपने वंश के आचार को त्याग कर नरक को प्राप्त होने जा रहे थे। इसलिए हम तुम्हें ठीक मार्ग दिखाने के लिए आये हैं। तुम अपने घर लौट कर हमारे जैसे दान-पुण्य करके देवत्व को प्राप्त कर लो।" इंद्र ने समझाया।

इंद्र का उपदेश सुनते ही मच्छरिकोशिय सोच में पड़ गया। उसे अपने व्यवहार पर बहुत पश्चाताप हुआ और उस का हृदय बदल गया। उसने घर लौट कर अपनी सारी संपत्ति गरीबों में दान कर दी और तपस्या करने के लिए हिमालय के पर्वतों में चला गया।
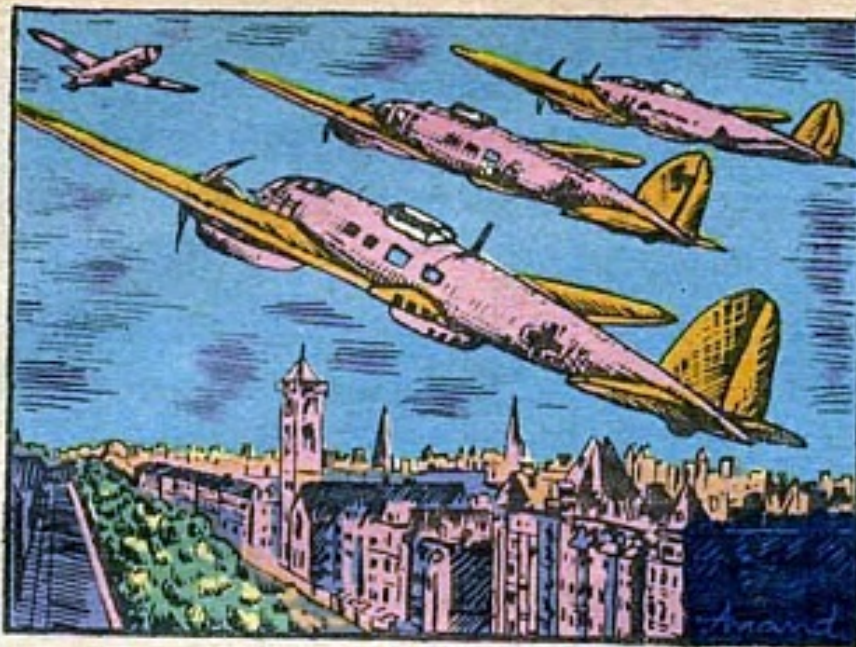
स्वतंत्रता की प्राप्ति

सन् १९३९ में पश्चिमी देशों में जो युद्ध शुरु हुआ, वह क्रमशः पूर्वी देशों में भी फैलने लगा। अजेय देश के रुप में विख्यात इंगलैण्ड को अचानक एक शक्तिशाली शत्रुदेश जर्मनी का सामना करना पड़ा। विमानों के द्वारा बम-वर्षा करना सरल हो गया था, इस कारण से युद्धों की भयानकता और तीव्र हो गई।

जर्मनी के नियंता हिट्लर भीषण हिंसा कांड तथा क्रूर कृत्य करने पर तुल गये। स्टालिन के अधिपत्य में स्थित रुस के साथ उन्होंने पहले मैत्री स्थापित की, फिर हठात् उस देश पर भी आक्रमण कर दिया। हिट्लर ने यहूदियों के साथ द्वेष किया। अपने देश में तथा अपने अधीनता में आये हुए देशों में बसने वाले लाखों यहूदियों का वध करवा डाला।

ऐशिया खंड वाले जापान ने हिट्लर के साथ मैत्री का हाथ बढ़ाया। जापान का चक्रवर्ती हिरोहिटो शासक शांति का समर्थक था, फिर भी अन्य राजनैतिक नेता और सेनापति लालची थे। उधर निरंकुश शासक मुसोलिनी के नेतृत्व में इटली ने भी जर्मनी और जापान के साथ अपना हाथ बंटाया।

अन्य देशों के साथ अमेरिका भी मिल गया। अब यह द्वितीय विश्व युद्ध बन गया। गांधीजी ने इंगलैण्ड को सूचित किया कि यदि अंग्रेज भारत को स्वतंत्रता देने का वचन दे तो युद्ध में भारत उनके साथ सहयोग करेगा पर इंगलैण्ड ने किसी प्रकार का आश्वासन नहीं दिया। परिणाम स्वरुप १९४२ में अंग्रेज़ों के विरुद्ध 'भारत छोड़ो' अन्दोलन आरम्भ हुआ। स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ने वाले वीरों को क़ैद करके अंग्रेज़ सरकार सताने लगी।

उसी समय जापान ने इंगलैण्ड के अधीनस्त मलाया तथा सिंगापुर पर आक्रमण किया। इंगलैण्ड के लिए सिंगापुर एक दुर्ग माना जाता था। उसके पतन ने सब को आश्चर्य में डाल दिया। ऐसा समय आसन्न हो गया था कि जर्मनी, जापान वाले दल ऍकिसस के देशों में इंगलैण्ड, अमेरिका आदि मित्र राष्ट्र पराजित हो जायेंगे।

अंग्रेज़ सरकार द्वारा बन्दी बनाये गये भारतीय नेता श्री सुभाष चंद्र बोस कारागार से भाग कर काबुल चले गये। वहाँ से १९४३ में वे सिंगापुर पहुँचे। पराजित अंग्रेजी सेना के भारतीय सेनिकों का संगठन करके आज़ाद हिन्द फौज बनाई और उसे वे सैनिक प्रशिक्षण देने लगे। जर्मनी, जापान आदि सम्मिलित दलीय देशों की सहायता से श्री बोस ने अंग्रेज़ों को भारत से भगाने की योजना बनाई।

आज़ाद हिन्द फौज ने अनेक विघ्न-बाधाओं का सामना करते हुए भारत की ओर प्रस्थान करके मणिपुर के कोहिमा में प्रवेश किया। इसके बाद पर्याप्त अस्त्र-शस्त्रों के अभाव में वह सेना वहाँ से आगे नहीं बढ़ सकी। जापान भी विजय के अवसर को खो बैठा। इसके बाद १९४५ अगस्त में सुभाष चंद्र बोस रहस्यात्मक ढंग से गायब हो गये।
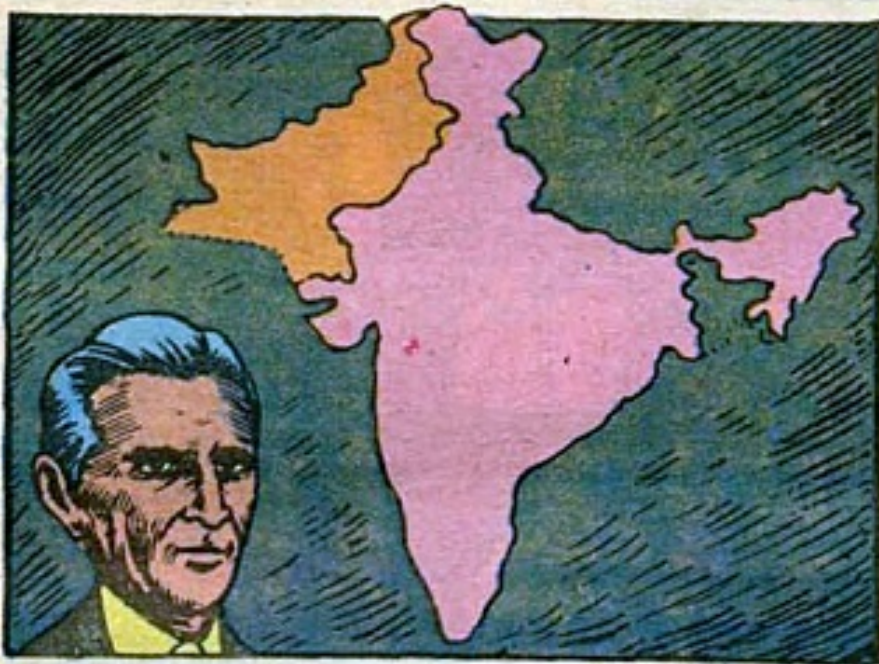
उसी समय मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना ने मुसलमानों के लिए पाकिस्तान के नाम पर एक अलग राज्य की मांग उठाई। देश के अनेक नेताओं ने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया कि उनकी यह माँग उचित नहीं है। फिर भी अंग्रजों से परोक्ष रुप में प्राप्त प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से जिन्ना ने अपने हठ को नहीं छोड़ा।

अनेक वर्षों से हिन्दू और मुसलमानों के बीच भ्रातृत्व बढ़ता ही चला आ रहा था, पर पाकिस्तान के निर्माण के तर्क ने दोनों धर्मों की जनता के दिलों में धार्मिक विद्वेष के विष बीज बो दिये। मुस्लिम लीग ने अपनी मांग को बल देने के लिए १६ अगस्त १९४६ को प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया की घोषणा की। कलकत्ता, दिल्ली इत्यादि अनेक नगरों में सांप्रदायिक दंगों के कारण भीषण खून खराबा हुआ। हज़ारों की संख्या में निरीह जनता अपने प्राण खो बैठी।

स्वातंत्र्य आन्दोलन के प्रमुख नेता तथा महान् राजनीतिज्ञ जवाहर लाल नेहरु ने १९४६ में स्थापित अंतरिम सरकार का नेतृत्व वहन किया। नेहरु ने मुस्लिम लीग को समझाने का अनेक प्रकार से प्रयत्न किया कि भारत के विभाजन की मांग का त्याग कर शासन के कार्य में सक्रिय रुप में हाथ बंटाये; पर मुस्लिम लीग ने न माना। इस पर स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए भारत महान् त्याग करने को तैयार हो गया।

विश्व युद्ध में महान् सेनापति के रुप में यश प्राप्त जनरल माऊंट बैटन १९४७ में भारत के गर्वनर जनरल नियुक्त हुए। उनके साथ चर्चा करने के बाद नेहरु ने ३ जून १९४७ को यह घोषणा की कि भारत के विभाजन के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सहमत है। उसी वर्ष १५ अगस्त को भारत स्वतंत्र हुआ।
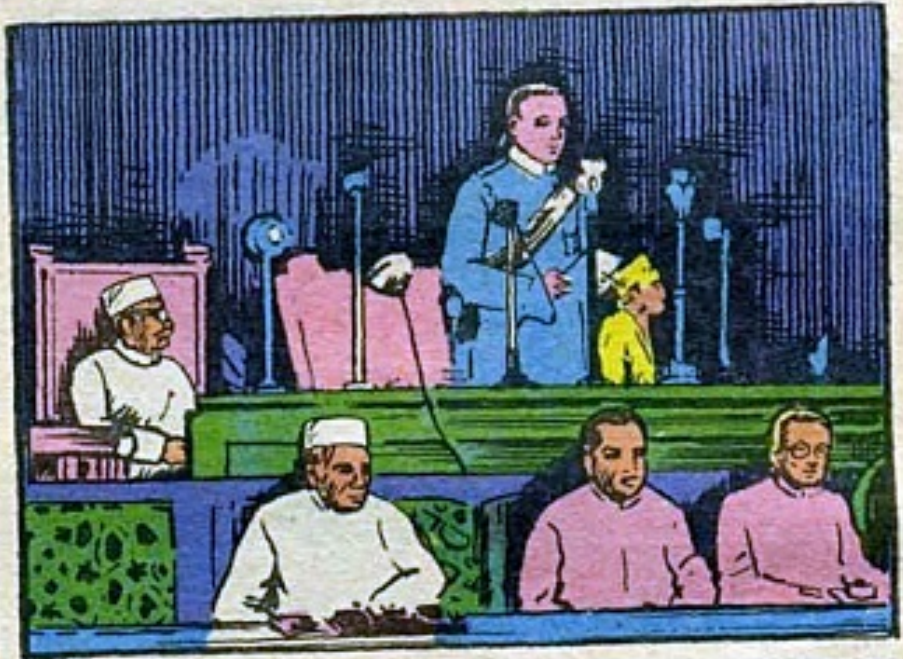
भारत विभाजन के फल स्वरुप सांप्रदायिक दंगे, युद्ध, शरणार्थी इत्यादि अनेक समस्याएँ देश के सामने उत्पन्न हुई, परन्तु भारत में अनेक विभिन्नताएँ होते हुए भी अपार सहनशीलता एवं एकता है। समस्त भारतवासी एकता को ही अपना बल समझकर सारे विघ्नों का सामना करते हुए अपने प्राचीन वैभव का स्मरण करके उज्ज्वल भविष्य के हेतु एक साथ आगे बढ़ रहे हैं।

ईमानदारी

केशवराम नामक गाँव में अत्यन्त ईमानदार और बुद्धिमान के रुप में यश प्राप्त करने वाला गोपराज लगभग साठ वर्ष तक मुखिया बना रहा। एक दिन अचानक उसका देहान्त हो गया। इस पर सभी ग्रामवासी जमींदार के घर पहुँचे और निवेदन किया, "महानुभाव, गोपराज के कोई उत्तराधिकारी नहीं है। इसलिए आप ही स्वयं उन्हीं के समान ईमानदार व्यक्ति को गाँव के मुखिया के पद पर नियुक्त कर दीजिए।"

जमींदार ने ग्रामवासियों को भेज कर दीवान से पूछा, "पद पर रहते समय ही किसी आदमी की ईमानदारी का पता लगाया जा सकता है। लेकिन एक बेकार व्यक्ति को गाँव के मुखिया का पद देते समय हम उसकी ईमानदारी का कैसे पता लगा सकते है ?"

"यह बात सही है।" यह कह कर दीवान ने केशवराम गाँव के मुखिया के पद के लिए योग्य उम्मीदवारों के लिए ढिंढ़ोरा पिटवाया। साथ ही यह सूचना दी कि ऐसे उम्मीदवार पहले जमींदार के खज़ांची से मिल लें।

एक सप्ताह बाद दस उम्मीदवार आकर खजांची से मिले। खजांची ने अलग रुप से उन लोगों से बातचीत की और दूसरे दिन दस बजे उन लोगों को जमींदार के यहाँ मिलने को कहा। इसी सूचना के अनुसार सब उम्मीदवार जमींदार के यहाँ पहुँचे। उस समय दीवान और खजांची दोनों वहाँ पर थे।

उन दस व्यक्तियों में से खजांची के द्वारा चुने हुए नागवर्मा नामक व्यक्ति को केशवराम गांव के मुखिया के रुप में नियुक्त करने की घोषणा की गई। इस पर शेष नौ व्यक्तियों ने कहा, "श्रीमान, यह तो सरासर अन्याय है। हमें यह नौकरी दिलाने का वचन देते हुए खज़ांची ने प्रत्येक व्यक्ति से एक हज़ार सिक्के रिश्वत् के रुप में लिये हैं।"

इस पर दीवान ने बीच में टोककर कहा, "खजांची के द्वारा मैंने ही यह परीक्षाएँ लीं है। गाँव के मुखिया के पद के लिए रिश्वत देने वाले तुम लोग इस पद के प्राप्त होने के बाद रिश्वत नहीं लोगे, इस बात का क्या प्रमाण है ? तुम लोगों के भीतर ईमानदारी नहीं है। नागवर्मा ने रिश्वत देने से इनकार किया, इसलिए इस बात में कोई संदेह नहीं रहा कि गाँव के मुखिया के पद के लिए वही योग्य व्यक्ति है।"

दो महानगर

एक समुद्र व्यापारी के यहां वामांग नामक एक गुलाम था। वामांग ने अपने मालिक के व्यापार में न केवल बड़ी सहायता की, बल्कि उसे पर्याप्त लाभ पहुँचाया। इसपर उसका मालिक बहुत प्रसन्न हुआ और उसे गुलामी से मुक्त करके बोला, "मैं तुम्हारी सेवा और कड़ी मेहनत से बहुत प्रसन्न हूँ। इसलिए मैं तुम्हें स्वतंत्र रुप से जीवन बिताने का अवसर देना चाहता हूँ। तुम मेरे जहाज़ों में में से एक ले लो। स्वतंत्रता पूर्वक व्यापार करके अपना जीवन बना लो।"

वामांग की प्रथम वाणिज्य यात्रा सफल न रही। समुद्र के बीच तूफान आया और सारे माल सहित वामांग का जहाज़ डूब गया। सभी नाविक समुद्र में डूब गये। अकेला वामांग तैर कर तट पर लग गया।

वह तट एक टापू था। वामांग उस टापू में प्रवेश करके थोड़ी दूर पैदल चलकर एक महानगर में पहुँचा।

नगर के सभी मार्गों पर जनता खड़ी थी। वामांग को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वे सब लोग उसी की प्रतीक्षा में भीड़ लगाकर खड़े हुए हैं। पहले तो उसे भय लगा, फिर उसने अपने आपको संभाला और आगे बढ़ा। भीड़ के समीप पहुँचते ही जनता नारे लगाने लगी, "महाराज की जय!" इसपर वामांग और अधिक विस्मय में आ गया और मन ही मन सोचने लगा, "ये लोग मुझे देख कोई और व्यक्ति समझ कर भ्रम में पड़े हुए हैं।"

इस बात को सोचकर वह बहुत घबराया कि न जाने वे लोग अब उसके साथ कैसा व्यवहार करेंगे। परन्तु उसने यह कहकर अपने मन को समझाया कि अब किया भी क्या जा सकता है, जो होगा देखा जायेगा।

इसके बाद सभी लोगों ने वामांग को घेर लिया। थोड़ी देर में वहाँ पर सजा हुआ एक

हाथी लाया गया ।

लोग वामांग को हौदे पर बिठाकर राजकीय प्रतिष्ठा के साथ राजमहल में ले गये ।

तदुपरान्त उसकी पोशाक उतार कर एक संदूक में राजमहल के अन्दर सुरक्षित रखी गई। अब उसको नहला कर राजोचित वस्त्र पहनाये गये । उसे इस प्रकार सजा दिया जैसे वह राजा हो ।

वामांग ने उस भीड़ को सम्बोधित कर पूछा, "तुम लोगों ने इस प्रकार मुझे राजा बना दिया, इस का रहस्य क्या है ? तुम लोग न मुझको जानते हो और न मैं तुम लोगों को जानता हूँ ! किसी खतरे में फंस कर मेरा जहाज़ समुद्र में डूब गया और संयोग से मैं तुम लोगों के बीच आ पहुँचा । लेकिन मैं किसी स्वार्थ से इस देश में नहीं आया हूँ ।"

इस पर वहां के लोगों ने उस देश का समाचार सुनाया । बाईस वर्ष पूर्व उस टापू पर कोई क्रम बद्ध शासन न था । सर्वत्र अराजकता फैली हुई थी । उस समय उस टापू में एक पर्यटक आया । उस पर्यटक ने बताया, "एक राजा के नेतृत्व में शासन-कार्य सम्पन्न किया जाये तो इस टापू का विकास होगा । इस प्रकार राजतंत्र शासन के द्वारा अनेक देश विकास को प्राप्त हुए हैं । राजा यदि नियन्ता बनकर जनता का शोषण करने वाला न हो, तो इसके लिए उपाय यह है कि प्रति वर्ष नये राजा को नियुक्त किया जा सकता है । वह राजा उस देश की जनता में से कोई एक न हो कर दूसरे देश का निवासी हो तो उसका शासन निष्पक्ष हो सकता

है।" उस समय से इस टापू के लोग अपने देश में सर्वप्रथम पहुँचने वाले को राजा बनाकर उसके शासन को स्वीकार करते आ रहे हैं। एक वर्ष के समाप्त होते ही उसको समीप के जंगल में भेज कर नये व्यक्ति की प्रतीक्षा करते हैं। जंगल में भेजा गया व्यक्ति कैसे जीवित रहेगा, इसकी चिन्ता इस टापू के लोग बिल्कुल नहीं करते ।

इस प्रकार क्रमशः इस टापू के बाईस राजा हुए । वामांग तेईसवां राजा था ।

वामांग के मन में उसे प्राप्त होनेवाले वनवास के प्रति अधिक उत्साह पैदा हुआ । उसने कुछ सिपाहियों को लेकर उस जंगल में जाना चाहा। उस टापू के समीप में ही दूसरे टापू में एक जंगल था। वहां तक नावों में पहुँचना होता था ।

वामांग कुछ सिपाहियों को साथ लेकर जंगल में पहुँचा। इसके बाद चार-पांच दिन वहीं पर रहकर पूर्ण रुप से जंगल की जांच पड़ताल की। उस जंगल के भीतर मनुष्यों का जीना असंभव था, पर वहाँ पर उत्तम प्रकार की लकड़ी और उपजाऊ भूमि पर्याप्त मात्रा में थी।

जंगल के वृक्षों को काटकर वहाँ पर एक सुन्दर नगर का निर्माण किया जा सकता था। फलों और फूलों के बाग-बगीचे लगाये जा सकते थे ।

वामांग ने इस कार्य में कई लोगों को लगाया। उसके शासन की एक वर्ष की अवधि के समाप्त होने के पूर्व ही जंगल एक सुन्दर नगर के रुप में परिवर्तित हो गया था ।

नगर के चारों ओर सुन्दर उद्यान बन गये। नगर के निर्माण में सहयोग देने वालों ने उस नये नगर को ही अपना निवास बनाना चाहा ।

एक वर्ष पूरा हुआ। वामांग नये नगर में आ गया। उसके साथ अनेक नागरिक और पुराने नगर के लोग नये नगर में आ गये ।

इस घटना के बाद पुराने नगर के लोग वामांग की सेवाओं से दूर रहना नहीं चाहते थे। उन लोगों ने एक सभा बुलाकर यह निर्णय लिया कि वामांग ही उन दोनों महानगरों के लिए आजीवन राजा बनकर रहे ।

सज्जनता का आदर्श

सदानन्द स्वभाव से अच्छा था और बुद्धिमान भी। लेकिन उसका एक शौक था— वह किसी को हानि पहुँचाये बिना सबका मनोरंजन किया करता था। वह प्रति दिन गाँव के बाहर अपने मित्रों के साथ पहुँच जाता और उस मार्ग से आने-जाने वालों को छेड़ कर उनकी हँसी उड़ाया करता था। आरम्भ में उसकी यह आदत कई लोगों के लिए पीड़ा का कारण होती थी, और लोग उसपर बिगड़ पड़ते थे, लेकिन क्रमशः उसके नटखटपन को सहन कर अपने पर नियंत्रण करने लगे।

इसका कारण था कि सदानन्द को उस गाँव के जमींदार के घर में नौकरी मिल गई थी। उसका काम जमींदार के घर का हिसाब-किताब रखना था।

जमींदार के मन में सदानन्द के प्रति वात्सल्य पैदा हो गया। यह बात गाँव के सब लोग जानते थे। जमींदार के घर में काम पर लगने के बाद सदानन्द का नटखटपन पहले से कहीं अधिक बढ़ गया। गाँव के लोग उससे अब और अधिक परेशान रहने लगे।

एक दिन संध्या के समय सदानन्द अपने मित्रों के साथ गाँव के बाहर तालाब की मेंड पर जा बैठा। उस समय उसे अपने गाँव की ओर आने वाला एक आदमी दिखाई दिया।

वह आगन्तुक अधेड़ उम्र का था। उसके कपड़ों पर धूल जम गई थी। उसके पैरों में जूते न थे, देखने में वह एक गरीब जैसा लगता था।

सदानन्द ने उसकी ओर अवहेलना भरी दृष्टि दौड़ाई और अपने मित्रों से कहा, "भाइयों, जमींदार के घर कोई रिश्तेदार आ रहा है। इसको रास्ता बतला दो। पर याद रखना रास्ता बतलाने से पहले हमें उसके साथ परिहास करके अपना मनोरंजन करना है।"

आगन्तुक ने विनयपूर्वक सदानन्द के समीप पहुँचकर पूछा, "महाशय, आपको यह कैसे पता
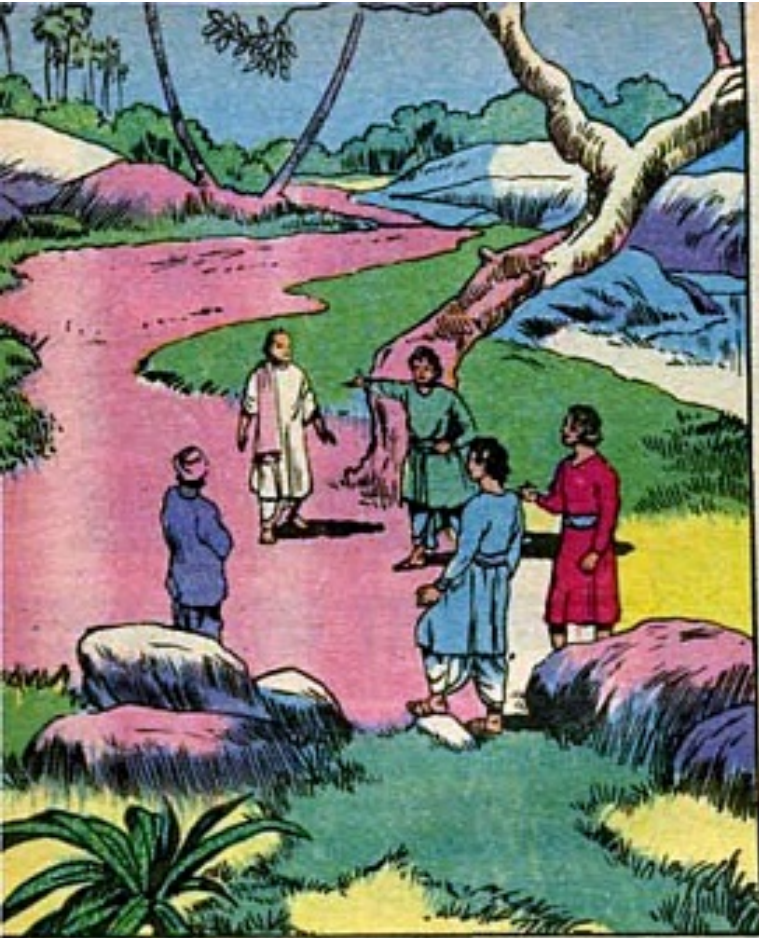
चला कि मैं जमींदार के घर ही जा रहा हूँ ?"

सदानन्द ठठाकर हंस पड़ा और बोला, "उफ ! चमेली जैसे आप के वस्त्र, कीमती जूते, अभी-अभी आप जिस बढ़िया गाड़ी से उतरे, वह, और इन सब से बढ़कर आपके चेहरे पर जो तेज दमक रहा है, वह— इन सारी बातों से पता चलता है कि आप जमींदार साहब के रिश्तेदार हैं ।"

"हां भाई ! मैं जिस गाड़ी पर चला था, उसका एक पहिया रास्ते में निकल आया । मैं गाड़ी से नीचे गिर पड़ा और चमेली जैसे मेरे उजले कपड़ों पर धूल जम गई । इसलिए मैं कोचवान को वापस भेज कर पैदल चला आया । मेरे कोचवान को कांटों से भरे रास्ते से लौटना था, इसलिए मैंने अपने कीमती जूते उसे दे दिये । मैंने सोचा था कि आप मेरे चेहरे पर दमकने वाले तेज़ को ही पहचान जायेंगे, पर आश्चर्य की बात है कि आपने सारी बातों को अच्छी तरह से समझ लिया है," आगन्तुक ने कहा ।

"ओह, ऐसी बात है ! तब तो मैं आपको सीधे जमींदार साहब के घर ले चलूँगा !" अपनी हंसी को रोकते हुए सदानन्द ने बोला ।

"इस अवस्था में उनसे मिलना उचित न होगा । इसलिए आप अभी मुझे उन की धर्मशाला में पहुँचा दीजिए । कोचवान के लौटने के बाद मैं अपने कपड़े बदल कर जमींदार साहब से मिलने जाऊँगा," आगन्तुक ने शान्त स्वर में उत्तर दिया ।

यात्रियों के ठहरने के लिए जमींदार ने उस गाँव में एक धर्मशाला बनवा रखी थी । उसमें वैसे सारी सुविधाएँ थी, लेकिन अत्यन्त गरीब लोग ही उस सराय में ठहरा करते थे । वहाँ पर ठहरने व खाने-पीने के लिए कोई शुल्क वसूल नहीं किया जाता था । इसलिए संपन्न लोग वहाँ ठहरने में अप्रतिष्ठा की बात समझते थे । जो गरीब लोग भी वहाँ टिकते थे, उनमें अधिकांश लोग ऐसे होते थे जो यह बहाना करते थे कि रास्ते में लुटेरों ने उन को लूट लिया था । कोई और ऐसी विपदा उन पर आ पड़ी जिस कारण से उन्हें सराय के आश्रय में गये बिना कोई चारा नहीं था । इस कारण से सदानन्द को लगा कि

यह व्यक्ति भी ऐसे लोगों में से एक होगा। अब उसने आगन्तुक के साथ कुछ परिहास करने की बात सोची।

"आपका कोचवान कब तक लौट आएगा ?" सदानन्द ने पूछा।

"मैं कुछ निश्चित रुप से नहीं बतला सकता," आगन्तुक ने उत्तर दिया।

"अच्छी बात है। तब तो मैं अपने कोचवान के कपड़े आपको दूँगा। आप अपने कपड़े बदल लेंगे ?" सदानन्द ने फिर पूछा।

इस पर वहाँ पर बैठे सब लोग हँस पड़े।

इस पर भी आगन्तुक नाराज़ नहीं हुआ और उसने शान्तचित से पूछा, "तब तो मैं आपके घर चलूँगा। कपड़े देंगे ?"

यह प्रश्न सुनकर सदानन्द ने सोचा कि यह कोई भिखारी होगा। वह परिहासपूर्ण स्वर में बोला, "आप कोचवान के कपड़े पहन लेंगे तो जमींदार के दर्शन नहीं हो सकते !"

"वे मेरे कपड़ों की ओर ध्यान नहीं देंगे। मुझे तो वे बहुत मानते हैं क्योंकि वे मेरे निकट मित्र हैं," आगन्तुक ने कहा।

"तो फिर संकोच क्या है। आप इसी रुप में उनसे मिल सकते हैं न ?" सदानन्द ने पूछा।

"सुनो भाई, प्रत्येक व्यक्ति को हर बात में कुछ न कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है। भगवान के मन्दिर में प्रवेश करना हो तो स्नान करके जूते खोल कर जाना पड़ता है। इसी प्रकार चाहे कोई अत्यन्त आत्मीय बन्धु व मित्र क्यों न हो, किसी के घर धुले हुए कपड़ें पहन कर ही जाना उचित होता है। मुझे अपने गंदे

कपड़ों को बदलना ही होगा। इसलिए आप मुझे सराय का रास्ता दिखा दीजिए," आगन्तुक बोला।

"सराय के सारे मामले मैं ही देखा करता हूँ। उसमें ठहरने के लिए हमारे जमींदार साहब ने कुछ नियम बना रखे हैं, पहले आपको उनका पालन करना होगा," सदानन्द ने कहा।

"बताइए, वे नियम क्या हैं ?" आगन्तुक ने पूछा।

"पहले बीस दण्ड पेलने हैं। दो गीत गाने हैं। इसके बाद सामने दिखाई देने वाले वृक्ष की सौ बार परिक्रमा करनी होगी क्या आप यह सब कर सकेंगे ?" सदानन्द अपनी हँसी पर नियंत्रण रखते हुए बोला।

आगन्तुक थोड़ी देर तक सोचते हुए मौन रहा, फिर उसने पूछा, "भाई, यह बताइए कि आप मेरी हँसी उड़ाने के लिए ये सारी बातें बता रहें हैं या जमींदार साहब ने सचमुच ऐसे नियम बना रखे है ?"

"मैं कभी झूठ नहीं बोलता..." सदानन्द उत्तर दे रहा था, तभी अचानक जमींदार साहब उधर से आ निकले और आगन्तुक को देख विस्मय पूर्ण स्वर में पूछा, "अरे, तुम रत्नाकर हो न ?"

"हां, बे !" यों जवाब देकर उसने अपनी गाड़ी के पहिये के टूटने का वृतान्त सुनाया और कहा, "मैं पहले तुम्हारी सराय में ठहरकर अपने कपड़े बदल कर तब तुम्हारे घर आना चाहता था। इतने में तुम खुद आ गये।"

आगन्तुक को जमींदार ने पहचान लिया। उसने जमींदार साहब को "अरे, अबे !" कह कर बड़ी आत्मीयता के साथ पुकारा। यह व्यवहार देख सदानन्द भय के मारे थर-थर कांप उठा, पर जमींदार ने नये आगन्तुक को सदानन्द के साथ बोलने का अवसर दिये बिना कहा, "तुम हमारे गाँव आये, मेरे घर पर ठहरे बिना सराय में ठहरोगे ? वाह, तुम भी भले आदमी हो। चलो, चलो।" यह कह कर जमींदार आगन्तुक को अपने साथ घर ले गये।

डर के मारे सदानन्द दूसरे दिन जमींदार के घर नहीं गया। उसने सोचा कि जो शरारत उसने उनके मित्र के साथ की है, उसका पता चलते ही जमींदार नाराज़ हो जायेंगे और उसे कड़ी

सज़ा देंगे। यह सोच कर उसने अस्वस्थ होने का समाचार भिजवा दिया, लेकिन थोड़ी देर बाद रत्नाकर ही स्वयं सदानन्द के घर आ पहुँचा।

रत्नाकर को देखते ही सदानन्द आपाद मस्तक काँप उठा और आँखो में आँसू भर कर बोला, "महानुभाव, मुझे क्षमा कर दीजिए।"

"किसलिए क्षमा करनी है ?" यह कहकर रत्नाकर पलभर चुप रहा, फिर बोला, "अच्छा भाई, यह बता दो, कि यदि कहीं से कोई गरीब आकर सराय में टिकना चाहे तो क्या उसे तुम्हारी बताई हुई शर्तों का पालन करना पड़ता है ? तुम सच बता दो, क्योंकि सराय में ठहरने के लिए बूढ़े, कमज़ोर व अपाहिज लोग भी आ सकते हैं। यदि सचमुच ऐसी शर्तें हैं तो मैं जमींदार साहब को समझा कर उन कठिन शर्तों को हटवा सकता हूँ।"

रत्नाकर के मुँह से ये बातें सुनकर सदानन्द आश्वस्त हो गया और बोला, "जमींदार साहब तो आपके घनिष्ट मित्र हैं न ! आप उन्हीं के द्वारा ये सारी बातें जान सकते थे, लेकिन मेरे मुँह से क्यों जानना चाहते है ?"

इसपर रत्नाकर हंस कर बोला, "मैं जानता हूँ कि तुम मेरी हँसी उड़ाकर अपना मनोरंजन करने के लिए झूठ बोले थे। मान लो तुम झूठ बोले, यदि मैं इस मामले के बारे में जमींदार से जानकरी प्राप्त करूँ तो वे असली बात समझ कर तुम पर नाराज़ हो जायेंगे। तुम्हें नौकरी से हटा देने के साथ कड़ी सज़ा भी देंगे। असली बात यह है कि मैं किसी का पेट काटना नहीं चाहता। इसीलिए मैंने उनसे कुछ नहीं पूछा। यदि तुमने झूठ कह दिया तो तुम्हारे द्वारा ही असलियत जान लेना तुम्हारे लिये अधिक हितकर है। समझे ?"

रत्नाकर की सज्जनता सदानन्द की समझ में आ गई। उन के साथ अपना परिचय न होते भी उसने अकारण उस सज्जन पुरुष की हँसी उड़ाई थी, फिर भी वे जमींदार के द्वारा उसकी हानि नहीं होने देना चाहते।

इस घटना से सदानन्द की आँखें खुल गईं। उसने न केवल अपनी भूल समझ ली बल्कि इसके बाद उसने मनोरंजन के लिए ही सही दूसरों की हँसी उड़ानी बन्द कर दी।

दीवान की जाँच

कासीपुरा के जमींदार घुड़सवारी, शिकार और मल्ल विद्याओं के बड़े शौकीन थे। उन्होंने अपनी जमींदारी के अर्न्तगत आने वाले गाँवों में अखाड़े और व्यायामशालाएँ खोल दी थीं, पर उन की ओर से चलने वाली पाठशाला एक भी न थी।

एक बार वे अपने पड़ोसी गाँव गोपवर के जमींदार से मिलने गये और उन के साथ वे कई गाँवों का दौरा करके लौटे। उन गाँवों की पाठशालाओं तथा बच्चों की पढ़ाई के संबध में गोपवर के जमींदार जो अभिरुचि दिखाते थे, उसे देख कासीपुरा के जमींदार बहुत ही प्रभावित हुए। उन्होंने निश्चय किया कि वे अपने गाँव में भी पाठशालाएँ खोलेंगे।

अपने गाँव को लौटते ही कासीपुरा के जमींदार ने अपने दीवान को बुलवा भेजा और कहा, "हमें भी अपनी जमींदारी के अधीन रहने वाले गाँवों में बच्चों की पढ़ाई के लिए पाठशालाएँ खोलने की आवश्यकता है। इस मामले में हमें खर्च से घबराना नहीं है। आप तुरन्त पाठशालाएँ खोलकर अध्यापकों की नियुक्ति करवा दीजिए।"

दीवान साहब धन खर्च करने से घबराते थे। वे भी जमींदार साहब की भांति शिकार खेलने और मल्लविद्या में बड़ी रुचि रखते थे। फिर भी उन्हें जमींदार के आदेश का पालन करना था, इसलिए यह आदेश दिया कि प्रत्येक गाँव में एक पाठशाला खोली जाये। पर उनके सामने अध्यापकों की नियुक्ति की समस्या पैदा हो गई।

दीवान साहब ने इस संबध में जमींदार साहब से परामर्श किया और अन्त में सभी गावों को यह आदेश जारी किया। इस समय जो लोग व्यायामशालाओं के अधिपति नियुक्त हुए हैं वे दिन में बच्चों को पढ़ायें और सूर्यास्त के बाद व्यायामशालाओं का संचालन करें।

मनीषा कोठारी

इस प्रकार कासीपुरा की जमींदारी के प्रत्येक गाँव में पाठशाला स्थापित हुई। एक साल बाद उनका पर्यवेक्षण करने के लिए दीवान साहब स्वयं चल पड़े ।

दीवान साहब सब से पहले गंगा सागर नामक गाँव पहुँचे और वहाँ की पाठशाला का निरीक्षण किया । उस समय अनेक विद्यार्थियों के साथ स्वयं अध्यापक भी ऊँघ रहे थे । कुछ विद्यार्थी खेलते हुए शोरगुल मचा रहे थे ।

उस दृष्य को देखते ही दीवान साहब का पारा चढ़ गया । उन्होंने ऊँघने वाले एक लड़के को जगाकर डांट कर पूछा, "तुम लोग यहाँ पर सोने के लिए आये हो ? क्या यह पाठशाला तुम्हारे सोने के लिए खोली गई है ? अभी मैं तुम्हारी परीक्षा लेता हूँ । आखिर तुम्हारी पढ़ाई कहाँ तक पहुँची है ?" यह कर दीवान साहब ने लड़के से पूछा, "अरे छोकरे ! बताओ, रामायण और महाभारत की रचना किसने की ?"

इस पर लड़का थर-थर कांपते हुए बोला, "श्रीमान जी, मुझे मत मारो । सचमुच ये दोनों ग्रन्थ मैंने नहीं लिखे हैं ।"

यह उत्तर सुनकर दीवान जी झल्ला उठे और अध्यापक के कंधे पर थपकी देकर उसको जगाया और डाँट कर पूछा, "क्या तुम बच्चों को ऐसी ही शिक्षा देते हो ? मैंने तुम्हारे एक विद्यार्थी से पूछा कि रामायण और महाभारत किसने लिखी तो वह कहता है —मैंने नहीं लिखी हैं ।"

दीवान साहब को अपने सामने देखते ही अध्यापक की नींद का नशा उत्तर गया । उसने दोनों हाथ उठा कर प्रणाम करते हुए कहा, "महानुभाव, मुझे क्षमा कर दीजिए । उसने नींद के नशे में ऐसा उत्तर दिया होगा । मेरा विश्वास है कि उन ग्रन्थों की रचना उसी ने की होगी ।"

यह उत्तर सुनकर दीवान जी और अधिक आग-बबूला हो गये और सीधे प्राधानाध्यापक के कमरे में पहुँचे । उनको सारी कहानी सुना कर पूछा, "मैंने कभी नहीं सोचा था कि पाठशाला की शिक्षा का ऐसा बुरा हाल होगा । इस की तुम क्या सफाई देते हो ?"

प्रधानाध्यापक घबरा कर बोले, "श्रीमान जी, आप अन्यथा मत सोचिये । इस गाँव के

लोग निरे भोले-भाले हैं। बच्चों को पढ़ाते समय अगर हम उनको डांटते है, तो उनके अभिभावक दूसरे दिन उन्हें पाठशाला में पढ़ने के लिए नहीं भेजते। आपने जो कठिन प्रश्न किये, उनका उत्तर बेचारे ये शिशु क्या दे सकते है ? हमारी आपस की बात है। कृपया बताइए, रामायण और महाभारत स्वयं श्रीमानजी ने ही लिखे हैं न ?"

इसपर दीवान जी और नाराज हो गये। उन्हें लगा कि अध्यापकों को कुछ भी ज्ञान नहीं है। यदि इसी प्रकार पढ़ाते रहे तो शिक्षा का प्रचार होने से रहा। वे अपने घर लौट आये और जमींदार साहब से मिलकर बोले, "महानुभाव, एक साल पूर्व हमने जो पाठशालाएँ खोली थीं, उनका निरीक्षण करने मैं गंगा सागर नामक गाँव में गया था। वहाँ की पाठशाला की अवस्था बहुत ही खराब है। वहाँ के अध्यापक और प्रधानाध्यापक की बुद्धि कुशलता के बीच मुझे कोई अन्तर नहीं दिखाई दिया। मैंने उन से पूछा कि रामायण और महाभारत की रचना किसने की। इसका सही उत्तर एक ने भी नहीं दिया। उन में से कोई यह सही उत्तर नहीं दे पाया कि राम ने रामायण लिखी और भरत ने महाभारत की रचना की। इसलिए मुझे आश्चर्य के साथ दुःख भी हो रहा है।"

जमींदार साहब ने दीवान जी के प्रति बड़ी सहानुभूति दिखाई और बोले, "आप हमारी जमींदारी के सारे गाँवों का एक साथ निरीक्षण करके वहाँ की त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न कीजिए। इस काम में आपकी सहायता करने के लिए हमारे शिकारी कुत्तों के पर्यवेक्षक श्री भैरव शास्त्री तथा घुड़साल की कुशलतापूर्वक देखभाल करने वाले अश्वपति आप के साथ जायेंगे। आपके साथ-साथ ये लोग भी विद्यार्थियों की उचित प्रश्नों द्वारा परीक्षा लेंगे। इस कार्य के निमित मैं एक लाख रुपये निर्धारित करता हूँ।"

जमींदार की बात को स्वीकार करने की पुष्टि के रुंप में दीवान साहब ने संतुष्टि पूर्वक सर हिलाया।

विष्णु पुराण

अहिंसा, प्रशान्त जीवन, जाति, वर्ण एवं वर्ग रहित समाज की स्थापना का प्रबोध करने वाला बौद्ध-धर्म वट-वृक्ष की भांति सर्वत्र व्याप्त होने लगा ।

प्राणी जगत का उद्धार करने के लिए करुणामूर्ति बनकर आये हुए सिद्धार्थ 'तथागत' तथा बोधिसत्व के नाम पर भगवान की भांति गुण गान किये जाने वाले बुद्ध की महिमा हिमालय की भांति बढ़ती गई। इस के साथ बुद्ध के जन्म जात शत्रु देवदत्त की ईर्ष्या भी बढ़ती गई ।

वृद्धावस्था में भी सर्वत्र भ्रमण करते हुए बुद्ध ने देखा कि समाज की निम्न जाति के लोग अग्रवर्णों द्वारा अत्याचारों तथा अपमानों के शिकार बन रहे थे। वे उन दलित-पीड़ित लोगों को अपने उपदेशों द्वारा सभ्य व सुसंस्कृत बना कर अपने शिष्य बना रहे थे। उस कारण से देवदत्त को बुद्ध के साथ प्रतीकार लेने का अच्छा अवसर मिल गया ।

उसने बुद्ध के विरोधियों का संगठन करके उनका सामना किया और अनेक षडयंत्र रचे ।

एक बार देवदत्त ने बुद्ध की आलोचना करते हुए उन से पूछा, "आपने अहिंसा का प्रचार किया, यह तो बड़ी अच्छी बात है । इसी सिद्धान्त से प्रभावित होकर कई लोग बौद्ध भिक्षु हुए। उनसे कहा गया कि मांसाहार वर्जित है, पर आपने इस संबध में कोई कठोर नियम नहीं बनाया । ऐसा क्यों ?

"वत्स देवदत्त ! मैंने यह अवश्य बताया है कि बौद्ध-धर्म के अनुयायियों को अहिंसा का

पालन करना चाहिए। लेकिन गरीबी के कारण से कई लोगों को समय पर जो कुछ मिले, उसे खाकर मांसाहारी बने रहना पड़ता है, धनी वर्ग को आसानी से प्राप्त होने वाला बलवर्द्धक शाकाहार निर्धन लोगों को सरलता पूर्वक उपलब्ध नहीं होता है। मानव जाति की सेवा करना ही अपना धर्म मानने वाले बौद्ध-भिक्षुओं को केवल जीने के लिए ही आहार ग्रहण करना पड़ता है। वे लोग भिक्षा मांग कर खाते है। पर मुझे यह आदेश देने का अधिकार नहीं है कि जो लोग भिक्षुओं को भिक्षा देते हैं, वे केवल शाकाहारी ही हों और मांसाहारी न हों। बौद्ध धर्म जाति, कुल और वर्ण-भेदों से परे है। इस प्रकार सर्व-समता का प्रबोध करने वाले बौद्ध-भिक्षु जनता के अन्दर मांसाहारी और शाकाहारी नाम से विभाजन करके भिक्षा के लिए जाना उनके सिद्धान्तों के विरुद्ध है। मैं चाहता हूँ कि बौद्ध भिक्षु विवक्षता का पोषण न करें। भिक्षा के लिए जो जाता है, उसे जो कुछ प्राप्त हो, उसे ग्रहण करना अनिवार्य है," बुद्ध ने समझाया।

"तो आपका कहना है कि भिक्षु को भिक्षा के रुप में किसी भी गृहस्थ से कुछ भी प्राप्त हो, उसे खाना आवश्यक है, है न ?" देवदत्त ने ज़ोर देकर पूछा।

बुद्ध मुस्कुरा कर बोले, "जो लोग जिस प्रकार के आहार के द्वारा अपना जीवन-यापन करते हैं, उसी को भिक्षा के रुप में दें तो जाति, कुल व वर्ग का भेद न रखने वाले भिक्षु को उसे खाना भिक्षुक धर्म है न ?"

बुद्ध के मुँह से ये बातें सुनकर देवदत्त सर हिलाकर वहाँ से चला गया।

देवदत्त मन ही मन सोचने लगा," बुद्ध का अन्त होना चाहिए वरना वह अपनी वृद्धावस्था और स्वास्थय का ध्यान किये बिना बौद्ध-धर्म का प्रचार करते रहेंगे। हीन व निम्न जातिवालों को ज्ञानी बनाकर उनको बौद्ध धर्मावलम्बियों के रुप में परिवर्तित करते जायेंगे। दलित, पीड़ित व शोशित वर्ग के लोग प्रबुद्ध हो जाते हैं तो अग्रवर्ण लोगों का आदर न होगा। उनका महत्व घट जाएगा। उनकी सेवा करने वाले वर्ग का अन्त हो जाएगा। इसलिए बुद्ध का अन्त

कर देना चाहिए।" इस प्रकार विचार करते हुए देवदत्त जीवक के पास पहुँचा ।

जीवक निम्न जाति में पैदा हुआ था और बुद्ध का शिष्य था। बौद्ध-धर्म के प्रति उसका सुदृढ़ विश्वास था और वह बुद्ध को भगवान के रुप में मानता था ।

देवदत ने जीवक को प्रलोभन देकर अपने पक्ष में करने के लिए कहा, "बुद्ध जो कुछ बताते हैं, सब झूठ है। तुम्हारी जाति और वर्ग के लोगों को अपने पक्ष में करने के लिए वे सब मनुष्यों को समान बताते हैं, लेकिन क्या वे तुम लोगों के जैसा जीवन बिता सकते है ? क्या वे तुम्हारा आहार ग्रहण कर सकते हैं ? तुम जो कुछ खाते हो, क्या वे उसे खायेंगे ? मैं तो समझता हूँ कि वे ऐसा नहीं करेंगे। यदि विश्वास न हो तो उन्हें अपने घर खाने का निमंत्रण देकर देखलो।" यों उकसा कर देवदत्त ने जीवक के दिल में विष के बीज बोये और बुद्ध को भिक्षा के लिए निमंत्रित करने की प्रेरणा दी ।

जीवक ने बुद्ध से प्रार्थना की कि वे उसके घर आकर उसका अतिथ्य ग्रहण करें। बुद्ध जीवक के साथ उसके घर पहुँचे । देवदत्त प्रच्छन्न रुप से यह सब देख रहा था ।

जीवक बुद्ध को अपने घर तो बुला लाया पर उनको भिक्षा देने में संकोच करने लगा। उसे लगा कि जो कुछ वह करने जा रहा है वह शायद उचित नहीं है। इसपर बुद्ध ने उसे समझाया, "बेटा जीवक, तुम यह सोचकर

संकोच मत करो कि मेरे लिए विशेष रुप में कुछ बनाया नहीं गया है । तुम जो कुछ खाते हो, उसी में से मुझे भी थोड़ा सा दे दो। आज मैं तुम्हारी भिक्षा पर भरोसा करके आया हूँ।"

जीवक ने बुद्ध को कांपते हुए हाथों से भिक्षा दी। बुद्ध ने संतुष्टि पूर्वक उसको खाया।

पहले ही बुद्ध का स्वास्थय कुछ ठीक नहीं चल रहा था। वृद्धावस्था के बढ़ने के साथ उनकी पाचन शक्ति घट गई थी। जीवक ने बुद्ध को मांसाहार की भिक्षा दी थी। वह भी कुछ अच्छा आहार न था ।

इसके बाद बुद्ध जीवक को आशीर्वाद देकर चले गये । पर जीवक के अन्दर पाप का डर आरम्भ हो गया । अपराधी की भांति उसका

चेहरा मुरझाता जा रहा था। ओट में से इस सारे दृश्य पर निगरानी रखने वाला देवदत्त बुद्ध के उत्तम चरित्र पर विस्मय करने लगा और अपने द्रोह पूर्ण कार्य के लिए पछताने लगा।

बुद्ध जीवक से प्राप्त आहार खाने के अभ्यस्त न थे, इसलिए उनके लिए वह विष तुल्य हो गया और वे बीमार पड़ गये। दिन प्रति दिन उनका स्वास्थय गिरता गया और उनका अन्तिम समय निकट आया।

बुद्ध की शय्या के चारों तरफ उन के प्रमुख शिष्य सिर झुकाये मौन हो चिन्ता में डूबे हुए थे। सारा परिसर स्तब्ध और शान्त था। उस समय अपने को अपराधी मान कर सर झुकाये लड़-खड़ाने वाले कदम बढ़ाते जीवक और देवदत्त आ पहुँचे। उनके चेहरों पर पश्चाताप झलक रहा था। वे इस प्रकार चतुर्दिक घबराई हुई दृष्टि प्रसारित कर रहे थे, जिसमें यह भाव प्रति-बिम्बित था— भगवान, हम आप के चरण छूकर क्षमा की यचना करते हैं। अपनी करनी के लिए पछता रहे हैं, इसलिए हमें क्षमा करने की कृपा करें।

बुद्ध ने उनके आगमन को समझ लिया, आँखें खोलकर प्रेमपूर्वक उन दोनों को अपने समीप बुलाया और उन्हें समझाया, "तुम दोनों चिन्ता न करो। किसी न किसी रुप में मृत्यु निश्चित है। बस, तुम मेरे निर्वाण में सहायक बनो। तुम्हारे प्रति कृतज्ञ हूँ। निर्वाण तो बाह्य नेत्रों को न दीखने वाला एक प्रकाश है। ज्याति के बुझते समय उसका प्रकाश जहाँ पहुँच जाता है, मैं भी उस निर्वाण पथ पर पहुँच रहा हूँ।"

बुद्ध के वचन सुनने पर देवदत्त के भीतर बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ। उसने बुद्ध के चरण स्पर्श करने की अनुमति मांगी। बुद्ध ने उसे अपने निकट बुलाकर, उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, "वत्स देवदत्त ! जो व्यक्ति मानव के कल्याण हेतु अपनी बुद्धि का उपयोग करके श्रम करता है, वही बुद्ध है। वह बुद्ध मृत्यु से परे होता है। मानवों के उद्धार के लिए अवतरित होने वाले सभी महात्मा बुद्ध हैं। तुमने जाति वैर को लेकर व्यक्तिगत रुप से मेरे साथ द्वेष किया, पर तुम धर्म के साथ द्वेष नहीं कर सकते। तुम मेरे साथ ही अपने द्वेष का
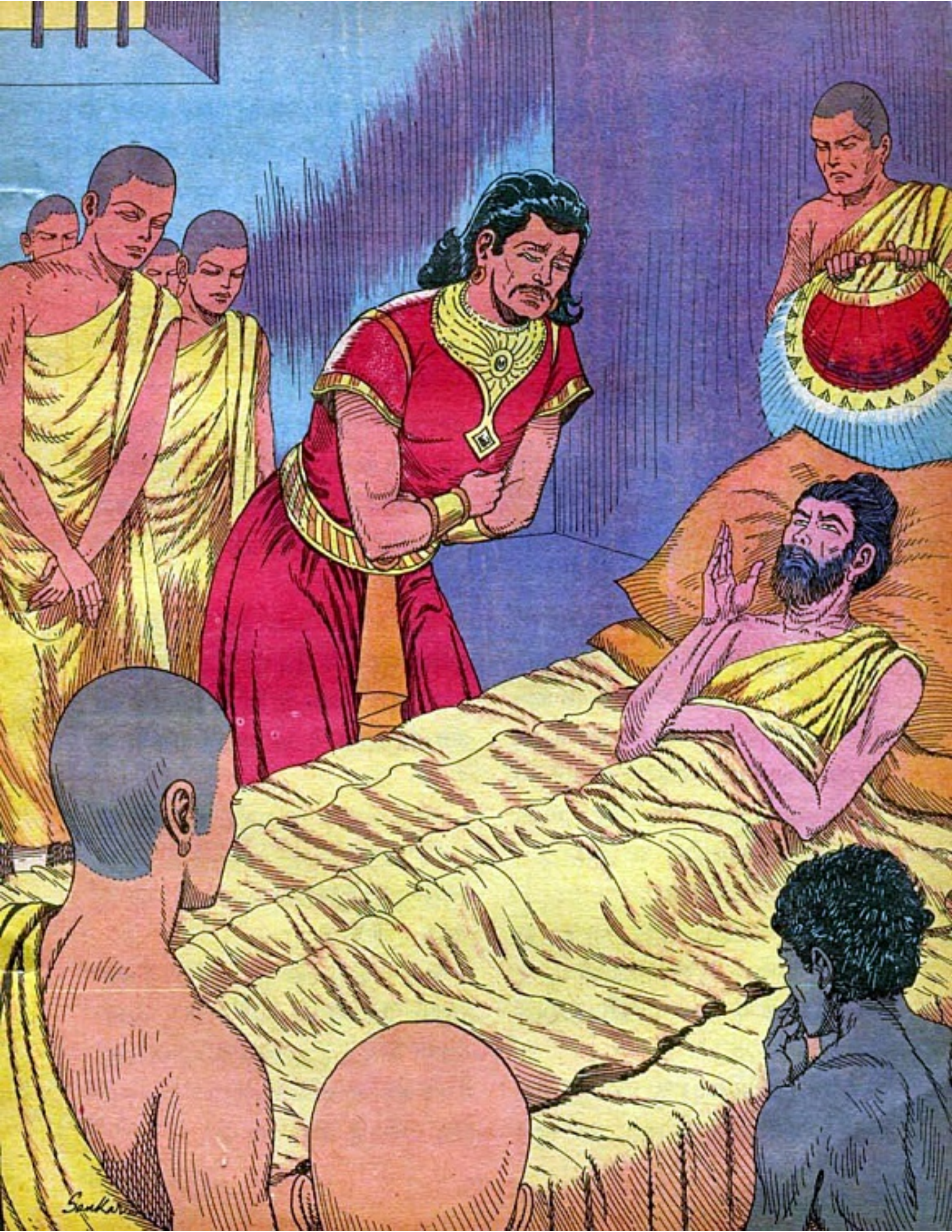
अन्त करो। मैं अब जा रहा हूँ। इसलिए तुम यह मान लो कि तुम मेरे स्थान पर हो। हमारे भाई आनन्द, नन्द आदि राजभोगों को त्याग कर बौद्ध भिक्षु बन गये हैं और मानव समाज की सेवा के लिए अपने को अर्पित कर चुके हैं। तुम भी मेरा अनुसरण करके बौद्ध-धर्म को स्वीकार कर उसको चारों ओर फैलाओ। बौद्ध-संघों का संचालन करो। बौद्ध भिक्षुओं को उचित पथ पर चलाओ। इस कर्म के लिए तुम समर्थ व्यक्ति हो।" यों समझा कर बुद्ध ने देवदत्त के सर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया।

देवदत्त पुलकित हो नेत्र मूँद कर 'बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि!' तीन बार जाप करके बोला, "हे बुद्ध भगवान! मानव का देवता के रुप में बदल सकने वाला मार्ग दिखाकर, आपने ऐसे उच्च आदर्श वाले धर्म का प्रबोध किया जो भगवान के संबध में सोचने के लिए स्थान तक नहीं देता। इसलिए आप ही स्वयं भगवान हैं।" यह कहकर देवदत्त ने हाथ जोड़ कर बुद्ध को प्रणाम किया।

वह वैशाख पूर्णिमा का दिन था। पूर्ण चंद्रमा आकाश में सुशोभित था। पूर्व दिशा में उदित प्राण जोति के रुप में यश प्राप्त बुद्ध भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया। पूर्ण चंद्र गगन मण्डल में और अधिक तेज़ भासित होते हुए शुभ्र चांदनी बिखेर रहा था।

बुद्ध के बाद उनके द्वारा प्रचारित धर्म, उपदेश, सूत्र आदि बौद्ध धर्म के रुप में रुपायित हुआ। बुद्ध भगवान के रुप में आराधना पाने लगे और क्रमशः वे एक अवतार पुरुष के रुप में माने गये।

महर्षि सूत ने इस प्रकार बुद्धावतार की कहानी समाप्त की फिर दशावतारों में अन्तिम दसवाँ अवतार 'कल्कि अवतार' के बारे में सुनाना आरम्भ किया।

सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग-ये चारों मिलकर एक महायुग कहलाते हैं। प्रत्येक महायुग के अन्त में कलियुग के अन्तिम चरण में जब कलि का प्रभाव बढ़ जाता है, तब सारा विश्व संकट में फंस जाता है।

उस युग में जहाँ एक ओर भ्रम होने लगता है कि 'ईश्वर है कि नहीं' तो दूसरी तरफ यह सन्देह भी पैदा होने लगता है कि 'क्या सचमुच मानव है ?' ऐसा काल है यह !

एकता में से भिन्नता में मानव समाज छिन्न-भिन्न होकर वर्ग-भेद, वर्ग कलह, जाति-विद्वेष, अत्याचार, दमन-नीति, हिंसा आदि दुर्गण बढ़ जाते हैं और उत्तम लोगों के लिए जीना कठिन हो जाता है ।

शासकों का व्यवहार ऐसा अन्यायपूर्ण हो जाता है कि उनसे राक्षस कहीं उत्तम प्रतीत होते हैं । एक-दूसरे को लूटना ही अपने जीवन का लक्ष्य मान कर मनुष्य खूंख्वार जानवरों से कहीं अधिक गये बीते होते जा रहे हैं । जाति को बढ़ाने वाले व्यक्ति पिशाच बनते जा रहें हैं ।

मेधावियों की मेधा विश्व के ध्वंस का कारणभूत होती जा रही है । करोड़ों लोगों को एक साथ मिटा सकने वाले साधन निर्मित हुए हैं । पृथ्वी को भस्म कर सकने वाले कारण प्रत्यक्ष होते जा रहे हैं । इसलिए ग्रहों की गति टेढ़ी होती जा रही है । प्रकृति के धर्म अस्त-व्यस्त होते जा रहे हैं । पृथ्वी माता विलाप कर रही हैं ।

ऐसे संकट काल में विष्णु यह अनुभव करते हैं कि दुष्टों का दमन कर शिष्ट जनों की रक्षा के लिए दण्डोपाय के अतिरिक्त कोई और उपाय नहीं है । इस विचार से वे कल्कि के रुप में अवतार लेते हैं । वही कल्कि का अवतरण है ।

शिवजी अपने अंश से एक श्वेत अश्व की परिकल्पना करके कल्कि मूर्ति को प्रदान करते हैं । वह महा अश्व कालगति से अधिक तीव्र वेग से सफेद धुँए को निश्वास के रुप में छोड़ते हुए धूमकेतु की भांति आकाश में प्रयाण करते हुए अन्य ग्रहों की ओर दौड़ जाता है ।

उस अश्व पर कल्कि आरुढ़ होकर आसमान का स्पर्श करने वाला लम्बा खड़ग धारण करके दुष्ट जनों का संहार करने के लिए चल पड़ते हैं । प्रलय कालीन मेघ-खंडों के भीतर की विद्युत से बनी तलवार बिजली की भांति आसमान से पृथ्वी तक फिसलते हुए दुष्टों का संहार कर देती है ।

कल्कि के अवतार का स्वरुप एक वीर योद्धा की भांति धक् धक् चमकने वाले एक

कवच को आपाद मस्तक धारण करके शिष्ट जनों के लिए एक दिव्य सुन्दर पुरुष के रुप में तथा दुष्टों के लिए एक महाभयंकर रुप में दर्शन देते हैं।

विष्णु के द्वारा अवतरित कल्कि का अवतार विभिन्न देशों में विभिन्न रुपों में दर्शन देते हुए तीव्र गति के साथ घोड़े को चलाकर अपने अवतार का कार्य संपन्न कर देता है।

कल्कि के आक्रमण से कलि का प्रभाव चूर-चूर होता जाता है, तब वह अपने तीक्ष्ण धार वाले खड्ग से दुष्टता को भगाते हुए विश्व के दुष्ट, अत्याचारी व पापियों का संहार करते हुए शिष्ट जनों की रक्षा करते हैं।

कल्कि के अवतार के साथ एक नये महायुग का आरम्भ होता है। ग्रहों की गति सही मार्ग पर आने लगती है।

भूदेवी (पृथ्वी माता) कल्कि के अवतार विष्णु की आरती करके अनेक प्रकार से उनकी स्तुति करने लगती है, तब ब्रह्म आदि देवता तथा सप्त ऋषि फूलों की वर्षा करते हुए उनकी प्रार्थना करने लगते हैं। नारदमुनि महती वीणा पर सामगान का आलाप करते रहते हैं।

कल्कि स्वयं पृथ्वी पर नियन्ता के शासनों, अत्याचार, अधर्म, अन्याय आदि का अन्त करके मानव समाज को भिन्नता में से एकता और शांतिपूर्ण सह जीवन की ओर अग्रसर कराते हैं, तब सतयुग का पुनः बीजारोपण हो एक और महायुग का शुभारंभ होता है। तब विष्णु अपने कल्कि के स्वरुप को वापस लेकर विश्व में सर्वत्र व्याप्त हो जाते हैं और विश्व स्थिति के लिए मूलभूत बनकर रह जाते हैं।

सर्व व्यापी विष्णु परिणाम स्वरुप हैं। काल (समय) ही उनकी स्थिति है, अस्तित्व है। यह महा विश्व ही उनका परिपूर्ण स्वरुप है। विष्णु ही आदि हैं और विष्णु ही अन्त। संसार का जन्म उनसे ही होता है, उसका पालन-पोषण वही करते हैं, और उसका अन्त भी वही। यों प्रकाश डालकर सूत महर्षि ने दशावतारों के लिए प्रमुख बने विष्णु का पुराण समग्र रुप से संपूर्ण किया। **(समाप्त)**

अंतिम इच्छा

जोगिन्दर नामक एक धनी व्यक्ति बुढ़ापे में एक खतरनाक बीमारी का शिकार हुआ और उसने खाट पकड़ ली। उसके पत्नी व बच्चे न थे। उसका उत्तराधिकारी बननेवाला मंगलदास दिन-रात उसकी सेवा में लगा हुआ था।

किशनलाल नामक एक वैद्य जोगिन्दर का इलाज कर रहा था। एक दिन उसने रोगी की जांच की और मंगलदास को अलग बुलाकर बोला, "तुम्हारे मामा की हालत बड़ी नाजुक है। वे होश में नहीं हैं। अगर वे थोड़ा सा होश में आ जायें तो किसी तरह तुम उन्हें ये गोलियाँ खिला देना, शायद काम बन जाय।"

वैद्य के जाते ही जोगिन्दर ने आँखें खोलीं और मंगलदास को निकट बुला कर बोला, "बेटा, जमीन-जायदाद कमाना जितना कठिन है, उसकी रक्षा करना भी उतना ही कठिन है।"

इसपर मंगलदास उदास भरा चेहरा बनाकर बोला, "मामाजी, आप ऐसी बातें क्यों करते हैं ? आपकी कोई अंतिम इच्छा हो तो बता दीजिए। इस अवस्था में उसकी पूर्ति करना मेरा कर्त्तव्य है।"

जोगिन्दर क्षण भर रुक कर बोला, "वैद्य किशन लाल दवा की दो गोलियाँ दे गया है न ? इस अवस्था में मैं तुम से इससे अधिक आशा क्या कर सकता हूँ ? उसके कहे अनुसार वे गोलियाँ मेरे मुँह में डालकर उसके परिणाम की प्रतीक्षा करो।"

जोगिन्दर के मुँह से ये बातें सुनकर मंगल दास अवाक् रह गया।

जल्दबाजी

एक गाँव में अब्दुल रसूल नामक एक युवक रहता था। वह निर्धन माँ-बाप का इकलौता बेटा था। रसूल का पिता मेहनत करके अपने परिवार का पालन-पोषण किया करता था।

रसूल जब सोलह साल का हुआ, तब उसकी माँ मर गई और इसके छः महीने बाद उसके बाप भी नहीं रहा।

अपने माँ-बाप के मरने के बाद रसूल का उस गाँव में रहने का मन न हुआ। उस अकेले का वहाँ अब मन नही लगता था। वह दिन भर कड़ी मेहनत करके जो कुछ कमा पाता, वह पेट भरने के लिए काफी न होता था। उसने सुन रखा था कि दूर के एक शहर में मेहनत करने वालों को अच्छी खासी मजदूरी मिलती है। उसने सोचा कि यदि वह उस शहर में चला जाये तो शायद उसका भाग्य चमक सकता है। इसलिए वह अपना गाँव छोड़ कर उस शहर पहुँचा।

शहर में रसूल एक व्यापारी के यहाँ नौकरी पर लग गया। शहर के कई मुहल्लों में उस व्यापारी की दुकानें थी। रसूल का काम एक दूकान से दूसरी दूकान में सामान पहुचाने का था।

वह तन-मन से कड़ी मेहनत करने लगा। दस साल मेहनत करके रसूल ने थोड़ा-बहुत धन जमा किया। उसने अपने खाने-पीने के खर्च में बड़ी किफ़ायत की। छुट्टी के दिनों में भी मनोरंजन पर धन खर्च न करके एक दम सादा जीवन बिताता था।

हर महीने रसूल को अपने मालिक से जो कुछ वेतन मिलता, उसमें से बचत की रक़म वह एक काज़ी के यहाँ जमा कर देता था। इस प्रकार दस वर्ष के अन्दर काफी बड़ी रक़म हो गई। इस पर उसके दिमाग में यह विचार आया कि शहर को छोड़कर अपने गाँव में जाकर एक छोटा-मोटा व्यापार शुरु किया जाये।

यह सोच कर वह काज़ी साहब के पास गया और अपना यह विचार काज़ी साहब को सुनाया। काजी ने उसको आशीर्वाद दिया कि इस कार्य में उसको सफलता मिले और उसका जमा किया हुआ सारा धन रसूल को सौंप दिया

रसूल उस धन को एक थैली में भर कर दूसरे दिन सूर्योदय के समय अपने गाँव के लिए चल पड़ा। वह दुपहर तक कहीं विश्राम किये बिना चलता रहा, लेकिन धूप के ताप के बढ़ने से उस भारी थैली को ढ़ोते हुए पैदल चलना उसे मुशिकल मालूम हुआ। दुपहर के समय कहीं थोड़ा आराम भी करना चाहे तो रास्ते के दोनों तरफ जहाँ-तहाँ खजूर के पेड़ों को छोड़ कर कोई छायेदार पेड़ दिखाई न दिया। रसूल उन थोड़े से छायादार खजूर के पेड़ों की छाया में खड़े हो अपने चमड़े के थैले से पानी पीने लगा।

उस वक्त उसी मार्ग से एक घुड़सवार आ निकला। जब वह उस के समीप आया, तब उसने उस घुड़सवार से पूछा, "भाई साहब, आप कहाँ जा रहे हैं ?"

घुड़सवार घोड़े को रोककर बोला, "वह सामने जो गाँव दिखाई दे रहा है, उस से होते हुए मैं अपने शहर को जा रहा हूँ। मैं उसी शहर में नौकरी करता हूँ।"

घुड़सवार के मुँह से यह जवाब सुनकर रसूल बहुत खुश हुआ और बोला, "वाह, कैसी किस्मत की बात है। उस गाँव के सराय

का मालिक मेरा रिश्तेदार है। मेरी इस थैली को ले जाकर क्या आप उसके हाथ सौंप देंगे ? यदि आप मेरा यह काम कर देंगे तो मैं आपका बहुत आभारी होऊँगा। मैं शाम तक उस गाँव में पहुँचकर उसके हाथ से अपनी थैली ले लूँगा। इसे ढोना मेरे लिए बहुत मुशिकल मालूम हो रहा है।"

रसूल की बातें सुनकर घुड़सवार हँस पड़ा और बोला, "दोस्त, उस थैली को ढोना तुम्हारे लिए मुशिकल है तो मेरे घोड़े के लिए भी तो मुशिकल होगा न ? तुम बुरा न मानो। परन्तु मैं तुम्हारा यह काम नहीं कर सकूँगा।" यह कहकर घुड़सवार वहाँ से चला गया।

रसूल को बड़ी निराशा हुई। वह सोचने

लगा कि कैसे अजीब आदमी होते हैं जो वक्त पर किसी की सहायता भी नहीं कर सकते।

लेकिन थोड़ी दूर आगे बढ़ने के बाद घुड़सवार के मन में एक विचार आया। उसे लगा कि उस यात्री की थैली को न लेकर उसने बड़ी मूर्खता की। यदि उस थैली में कीमती चीज़ें हों, तो गाँव की सराय के पास रुके बिना ही वह सीधे अपने शहर को जा सकता है और इस प्रकार बिना किसी परिश्रम के उसको कुछ धन-माल मिल जायेगा।

यों विचार करके घुड़सवार ने अपने घोड़े को वापस मोड़ा और रसूल की तरफ़ आने लगा। इस बीच रसूल के दिमाग में भी यह बात आई कि वह भी कैसा मूर्ख है। दस साल तक कड़ी मेहनत करके उसने जो धन जोड़ रखा था, उस धन की थैली को वह किसी अजनबी के हाथ सौंपने जा रहा था। यदि वह लोभ में आकर उस धन की थैली को लेकर भाग जाये तो वह कर ही क्या सकता था? दस साल तक दिन-रात मेहनत करके जो धन कमाया उसको क्या वह चन्द घंटे और नहीं ढो सकता?

रसूल इस प्रकार सोच ही रहा था कि घुड़सवार उसके निकट पहुँच कर बोला, "दोस्त, मैंने तुम्हारी बात पर एक बार फिर से सोच लिया है। मुझे लगा कि तुम्हारी सहायता करना हर प्रकार से मेरा धर्म है। वह थैली मेरे हाथ दे दो।"

परन्तु अब रसूल को समझ आ गई थी। उसने सोचा कि यह अजनबी अब मेरा धन हथियाने के लिए ही वापिस आया है, इसलिए इसे चालाकी से टाल देना चाहिए। इसलिये उसने मुस्कुराते हुए जवाब दिया, "दोस्त, मैंने भी फिर से एक बार इस बात पर विचार किया है। मुझे लगा कि मेरी थैली को खुद ढो ले जाना हर प्रकार से मेरे लिए हितकर है। मैं उस वक्त जल्दबाजी में आ गया था और आपने थोड़ी देर कर दी।"

उन दोनों ने परस्पर एक दूसरे के मन की बात भांप ली थी। फिर क्या था, घुड़सवार अपने घोड़े को मोड़ कर अपने रास्ते चल पड़ा।

बुद्धिमान कौन ?

जमुनादास और गोरखप्रसाद का यह विश्वास था कि वे एक दूसरे से अधिक बुद्धिमान हैं। इस बात को लेकर वे प्रतिदिन वाद-विवाद किया करते थे। एक बार उस रास्ते से चलने वाले विमलदास ने उनको झगड़ते देखकर समझाया, "मैं तुम्हारे झगड़े का निर्णय करूँगा। तुम दोनों से मैं एक प्रश्न करता हूँ और जो उसका ठीक उत्तर देगा वह बुद्धिमान माना जायेगा। तुम दोनों यदि इसका उत्तर न दे पाये तो तुम दोनों मूर्ख माने जाओगे और मैं बुद्धिमान माना जाऊँगा। ठीक है ?"

"मैं इस प्रतियोगिता में भाग नहीं लूँगा," यह कहकर गोरखप्रसाद वहाँ से चला गया।

इस पर विमलदास बोला, "देखा ? तुम दोनों में गोरखप्रसाद ही अधिक बुद्धिमान है। मैं तुम दोनों से ऐसा जटिल प्रश्न पूछकर अपने आपको अधिक बुद्धिमान कहलाना चाहता था जिसका उत्तर मैं स्वयं नहीं जानता, पर गोरखप्रसाद ने मेरे मन की बात ताड़ ली।"

इसके बाद जमुनादास गोरखप्रसाद के घर पहुँचा और उसे सारा हाल बताकर बोला, "विमलदास तो तुम्हें ही अधिक बुद्धिमान मानते हैं।"

गोरखप्रसाद आश्चर्य में आकर बोला, "मित्र ! अचानक मेरे पेट में दर्द होने लगा। मैं यह बात तुमसे कहना नहीं चाहता था, इसलिए झूठ बोलकर मैं घर चला आया। इसी झूठ ने शायद मुझे बुद्धिमान बनाया है।"

"ऐसा पेट-दर्द तो मुझे प्रति दिन होता है; लेकिन वह कमबख्त दर्द कभी ठीक समय पर नहीं होता। थोड़ी देर पहले तुम्हारे बदले मुझे पेट-दर्द हुआ होता तो विमलदास के मुँह से मैं ही अधिक बुद्धिमान कहलाता," यह कह कर जमुनादास पेट-दर्द न होने पर पछताने लगा।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां मार्च १९८५ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Pranlal K. Patel

Anant Desai

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

नवम्बर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: **भोजन कैसे पाऊं!**

द्वितीय फोटो: **मैं भी ज्ञान बढ़ाऊं!!**

प्रेषक: **सुनील गोस्वामी**, ६७/९, मोती बाजार, काश्मीरी लाल बिल्डिंग, देहरादून-२४८ ००१

क्या आप जानते है ? के उत्तर

१. फर्डिनण्ड मेगलिन; २. जावा ट्रेन्च; ३. पाक जल-सन्धि;
४. दक्षिण अमेरिका में स्थित अमेज़न नदी; ५. टाइबर नदी.

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, . Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

The stories, articles and designs contained herein are exclusive property of the Publishers and copying or adopting them in any manner will be dealt with according to law.

गले से 'खिचखिच' दूर करो...
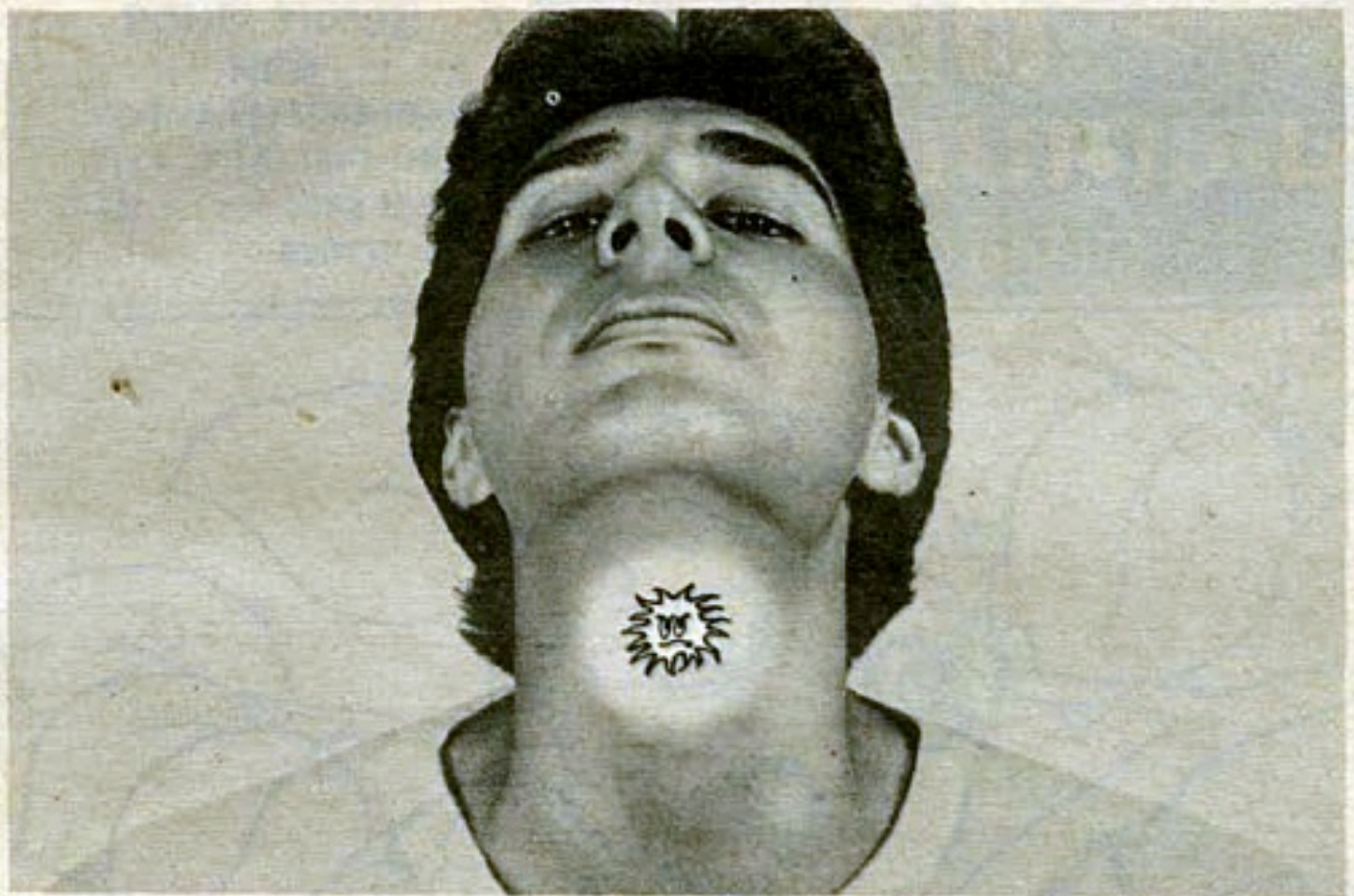
'खिचखिच' है क्या?
जब भी आपके गले में खराश हो या गला सूखा लगने लगे— तो समझिए आपके गले को 'खिचखिच' ने पकड़ा.

विक्स लीजिए, इसे दूर कीजिए
विक्स लीजिए.
विक्स खांसी की गोलियों में गले को आराम पहुंचाने वाली ६ विक्स औषधियां हैं, जो 'खिचखिच' दूर हटाती हैं.

इसलिए, जब भी गले में 'खिचखिच' हो, विक्स लो.

OBM/1829-HN
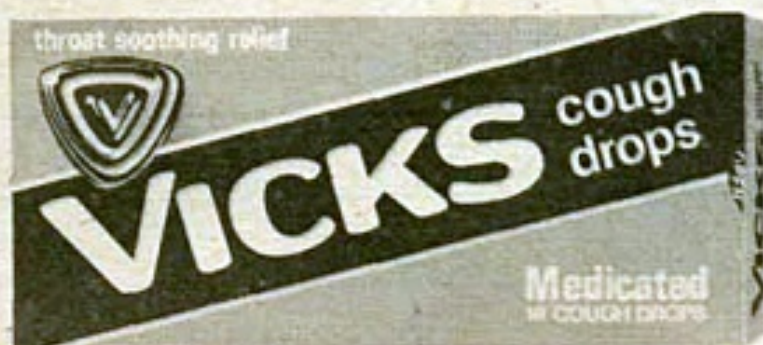
निःशुल्क प्रवेश

चन्दामामा कॅमल

रंग प्रतियोगिता

पुरस्कार जीतिए

कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-

दूसरा इनाम (२) रु. १०/-

तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-

१० प्रमाणपत्र

इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ११५०१, नरिमन पॉइंट पोस्ट ऑफ़िस, बम्बई ४०० ०२१.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name:...Age:..................

Address:..

....

प्रवेशिकाएं 31.1.1985 से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO 40

VISION/CPL/84102 HIN

चॉकलेटी मज़ा हर एक के लिए !
nutrine
chocolate
Eclairs
more milk
more butter
more chocolate
बाहर कैरेमल,
बीच में चॉकलेट
nutrine Eclairs
एक साथ दो स्वाद
CLARION/NC/84210
nutrine
भारत की सबसे ज़्यादा बिकने वाली

पारले ग्लूको के संग,
जागे शक्ति की तरंग-
हर नटखट नन्हे के अंग-अंग.

PARLE
Gluco
BISCUITS

बच्चे—ये शक्ति लाते कहाँ से हैं?
पारले ग्लूको बिस्किट से, और क्या!
हर समझदार माँ को पता है कि उसके नन्हे—
नटखट—बढ़ते बच्चों के लिए सबसे बढ़िया क्या है—
पारले ग्लूको का मीठा- कुरकुरा स्वाद. हमेशा ताज़े, हमेशा अच्छे—
जो बच्चों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी के लिए पारले बनाते चले आ रहे हैं.

पारले
ग्लूको
स्वाद में निराले, शक्ति से भरपूर

भारत के
सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट

वर्ल्ड पारितोषिक विजेता.

everest/84/PP/40-hn